CC0 In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्वर्ण जयन्ती समारोह स्मारिका

हरप्रसाद दास जैन महाविद्यालय, आरा

(१९४२-१९९२)

(वीर कुँवरसिंह विश्वविद्यालय, आरा)

२१ जनवरी, १९९३

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्वर्ण जयन्ती स्मारिका

प्रधान संरक्षक

प्रो. डॉ. सुरेन्द्र सिंह

कुलपति, वीर कुँवरसिंह विश्वविद्यालय, आरा

संरक्षक

प्रो. डॉ. पारसनाथ सिंह,

प्राचार्य, ह. दा. जैन कॉलेज, आरा (बिहार)

परामर्शदातृ समिति

प्रो. डॉ. दिनेन्द्रचन्द्र जैन
प्रो. डॉ. पशुपतिनाथ सिंह
प्रो. डॉ. कपिलदेव तिवारी *(अंग्रेजी)*
डॉ. चित्तरंजन कुमार सिंह
प्रो. डॉ. पारसनाथ सिंह
प्रो. डॉ. चन्द्रभूषण तिवारी
प्रो. डॉ. चन्द्रदेव राय
डॉ. मिथिलेश्वर

सम्पादक

प्रो. डॉ. राजाराम जैन

केन्द्रीय समिति, स्वर्ण जयन्ती समारोह, हरप्रसाद दास जैन कॉलेज, आरा द्वारा प्रकाशित ।

आवरण चित्र परिचय

स्वनामधन्य श्रद्धेय हरप्रसाद दास जी जैन की संगमरमर की यह मूर्ति श्रीआदिनाथ ट्रष्ट आरा द्वारा निर्मापित, समर्पित एवं उसीके सौजन्य से जैन कॉलेज के प्रांगण में स्थापित ।

सभी के लिए उत्तरोत्तर प्रगति के लिए प्रेरित करती हुई इस भव्यात्मा के सम्मुख हम सभी सहज श्रद्धापूर्वक नत मस्तक हैं ।

लोकसभा के पूर्व स्पीकर माननीय श्री बलिराम भगत के कर कमलों द्वारा २०/१२/१९७६ को इसका अनावरण किया गया था ।

श्री रवि प्रकाश पण्ड्या, तारा प्रिंटिंग वर्क्स, कमच्छा, वाराणसी द्वारा मुद्रित ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

GOLDEN JUBILEE CELEBRATIONS

HARPRASAD DAS JAIN COLLEGE, ARRAH (BIHAR)
(1942 - 1992)
(VEER KUNWAR SINGH UNIVERSITY, ARRAH)

5170

SOUVENIR

Published by

The Central Committee for
Golden Jubilee Celebrations
H. D. Jain College, Arrah (Bihar)
21th January, 1993

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Golden Jubilee Souvenir

Chief Patron

Prof. Dr. Surendra Nath Singh
Vice-Chancellor, V. K. S. University

Patron

Prof. Dr. Parasnath Singh
Principal, H. D. Jain College, Arrah

Advisory Committee

Prof. Dr. D. C. Jain
Prof. Dr. K. D. Tiwari
Dr. C. K. Singh
Dr. Mithileshwar

Prof. Dr. P. N. Singh
Prof. Dr. P. N. Singh (Eco., Dept.)
Prof. Dr. C. B. Tiwari
Prof. Dr. C. D. Rai

Editor

Prof. Dr. Raja Ram Jain

Cover Picture

Founder of the college Late Sri Harprasad Das Jain

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मंगल कामना-संदेश

सत्यमेव जयते

डॉ. भीष्म नारायण सिंह

राज भवन

मद्रास

१८ अगस्त, १९९२

सन्देश

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हो रही है कि हरप्रसाद जैन महाविद्यालय, आरा, अपनी स्वर्ण जयन्ती मनाने जा रहा है। एक उच्च शिक्षण संस्था स्थापित कर बाबू हरप्रसाद जैन ने इस क्षेत्र की अकथ सेवा की है तथा इस महाविद्यालय ने भी अनेक कीर्तिमान स्थापित कर अपने संस्थापक का नाम रोशन किया है।

मेरी शुभकामना है कि यह भविष्य में भी उन्नति की ओर अग्रसर होता रहेगा।

(भीष्म नारायण सिंह)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जगदानन्द

मन्त्री

जल संसाधन एवं पर्यटन विभाग, बिहार

संदेश

यह जानकर अत्यन्त ही प्रसन्नता हुई कि हरप्रसाद जैन महाविद्यालय, आरा स्वर्ण जयन्ती वर्ष में प्रवेश कर रहा है और इस अवसर पर महाविद्यालय परिवार इसकी स्वर्ण जयन्ती मनाने जा रहा है।

पचास वर्षों की अवधि में इस महाविद्यालय ने अपनी शिक्षा प्रसार एवं समाज कल्याण संबंधी आदर्शों के कार्य-कलाप की श्रेष्ठता के कारण बिहार राज्य के शिक्षा के इतिहास में गौरवपूर्ण कीर्तिमान स्थापित किया है।

महाविद्यालय के पुरातन छात्र इस देश के अनेकों विशिष्ट पदों को सुशोभित कर रहे हैं— जो इस राज्य के लिए गौरव का विषय है।

महाविद्यालय की स्वर्ण जयन्ती के शुभावसर पर हमारी हार्दिक शुभकामनाएं।

(जगदानन्द)
मन्त्री
जल संसाधन एवं पर्यटन विभाग
बिहार, पटना

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय

आरा (बिहार)

डॉ. सुरेन्द्र नाथ सिंह
कुलपति

यह जानकर मुझे अतीव प्रसन्नता हुई है कि हरप्रसाद दास जैन कॉलेज अपने गौरवमय अतीत के पचास वर्ष पूरे कर स्वर्ण जयन्ती मना रहा है । यह किसी भी महाविद्यालय के लिये गर्व की बात है कि उसने आधी शताब्दी तक उच्च शिक्षा के क्षेत्र में अनेक कीर्तिमान स्थापित किए हैं, और सामाजिक जीवन के हर क्षेत्र में अनेक रत्नों को सौंप कर उस क्षेत्र को स्वर्णिम प्रकाश दिया है। यही उच्च शिक्षा की उपलब्धि है और इस अर्थ में इस महाविद्यालय ने समाज की भरपूर सेवा की है। मुझे विश्वास है कि महाविद्यालय भविष्य में भी अपने आदर्शों और मान्यताओं के प्रति सचेष्ट रहते हुए सामाजिक उत्थान में भरपूर सहयोग करेगा।

हस्ता.— सुरेन्द्रनाथ सिंह
कुलपति

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मगध विश्व विद्यालय, बोधगया

रामकृष्ण महतो
कुलपति
मगध वि. वि., बोधगया (बिहार)

यह जानकर हमें अत्यन्त प्रसन्नता हुई कि ह.दा. जैन कॉलेज, आरा अपनी स्वर्ण जयन्ती मनाने जा रहा है।

जैन कॉलेज के सार्वजनीन बहुपक्षीय सेवा-कार्य राष्ट्रिय एवं सामाजिक विकास के इतिहास के स्वर्णिम अध्याय माने जायेंगे। यह कॉलेज शाहाबाद जिला (वर्तमान कालीन भोजपुर, रोहतास भभुआ एवं बक्सर जिले) का प्रथम संस्थापित शिक्षा-संस्थान है। साधनों के अभाव में भी जनपद के सर्वांगीण विकास में उसने जो सार्थक योगदान किया है, वह बड़ा ही प्रेरक एवं अनुकरणीय है।

स्वर्ण जयन्ती समारोह की सफलता हेतु मैं अपनी हार्दिक शुभ कामनाएँ प्रेषित करता हूँ।

रामकृष्ण महतो
कुलपति

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सम्पादकीय

"स्मारिका" मधुर-स्मृतियों का एक लघु पिटक होने के साथ-साथ एक प्रामाणिक दस्तावेज भी होती है। वह अपने संस्थान तथा उससे सम्बन्धित नगर और जनपद के विविध पक्षीय इतिहास, संस्कृति, एवं साहित्य के गौरव पूर्ण तथ्यों को उजागर करने वाली सामग्री प्रस्तुत करती है, इस कारण वह क्षेत्रीय इतिहास का एक खण्ड भी है और क्षेत्रीय सन्दर्भ-ग्रन्थ भी।

ह. दा. जैन कॉलेज, आरा (बिहार) के स्वर्ण जयन्ती समारोह के शुभावसर पर प्रकाशित स्मारिका का भी यही उद्देश्य रहा कि उसमें जैन कॉलेज की स्थापना के कल्पना-काल से लेकर आजतक के इतिहास एवं क्रमिक-विकास का चित्रण हो, उसके शासन, प्रशासन एवं अनुशासन, उसकी प्रगति, उसके शिक्षकों एवं शिक्षितों के विविध क्षेत्रों में किए गए महत्वपूर्ण अवदानों तथा अपने जनपद की चिराकांक्षाओं को पूर्ण करने की दिशा में किए गए विविध प्रयत्नों का, संक्षिप्त ही सही, क्रमानुसार वर्गीकृत विवरण प्रस्तुत किया जाय। हमें यह कहते हुए प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है कि हमारे अनुभव-वृद्ध युवा-प्राचार्य प्रो. (डॉ.) पारसनाथ सिंह ने इस श्रमसाध्य कार्य को भावी पीढ़ी की जानकारी के लिए लेखनीबद्ध करने का स्तुत्य प्रयास किया है।

आरा-नगर (प्राच्यकालीन नाम-आरण्यनगर अथवा आरामनगर अर्थात् वन-उपवन एवं फुलवारियों का हरा-भरा समृद्ध नगर) का प्राच्य भारतीय इतिहास, संस्कृति एवं साहित्य के इतिहास में विशिष्ट स्थान रहा है। किंवदन्तियों के अनुसार महर्षि जनक, महर्षि विश्वामित्र, पुरुषोत्तम राम एवं लक्ष्मण, तीर्थंकर महावीर एवं गौतम बुद्ध जैसे शलाका महापुरुषों की पदरज से यह भूमि धन्य रही है। आविद्धकर्ण तथा वाराणसी से पाटलिपुत्र की यात्रा करने वाले मेगास्थनीज, फाहियान, एवं ह्यूनत्सांग जैसे विदेशी पर्यटकों के लिए यह "मार्ग-नगर" रहा, तो महाकवि बाणभट्टके साहित्य-लेखन के लिए यह प्रेरणा का केन्द्र-स्थल रहा। पाटलिपुत्र की शास्त्रकार-परीक्षा में सम्मिलित होने के लिए तथा उसमें सफल होकर लौटने वाले सर्वोदय के आद्य उद्गाता— दक्षिण भारत के निवासी आचार्य समन्तभद्र (रत्नकरण्ड श्रावकाचार आदि के प्रणेता) तथा कायस्थ कुलोत्पन्न महाकवि हरिचन्द्र (तीर्थंकर धर्मनाथ के महाकाव्य शैली के संस्कृत धर्मशर्माभ्युदय महाकाव्य के प्रणेता) का विश्राम-नगर, हिन्दी भाषा एवं साहित्य के प्रथम स्तम्भों में परिगणित तथा खड़ी बोली के गद्य के आद्य प्रतिष्ठाता पं. सदल मिश्र (जिन्होंने खड़ी बोली हिन्दी का परिमार्जित रूप स्पष्ट किया) उनकी तथा आध्यात्मिक एवं लाक्षणिक साहित्य के लेखक सन्त कवि वृन्दावनदास आदि की जन्मभूमि, वीरवर बाबू कुँवरसिंह की योजनाओं तथा शौर्य-वीर्य का साक्षी और रामायण एवं महाभारत सम्बन्धी अनेक अनुश्रुतियों से यह नगर सम्बद्ध रहा है।

जैन कॉलेज को अपनी पवित्र धरोहर के रूप में प्रतिष्ठित करने वाले आरा नगर को सुरुचि-सम्पन्न एवं ख्याति प्रदान कराने में यहाँ के सभी नागरिकों के सक्रिय योगदान अविस्मरणीय हैं। एतद्विषयक सहज उपलब्ध सामग्री को स्मारिका में प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया गया है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भोजपुर जनपद का इतिहास भी अतिप्राचीन रहा है। पुराण-पुरुषों की चर्चा न भी की जाय, तो भी, यह नन्दों, मौर्यों एवं गुप्तराजाओं की योजना-निर्माण एवं कार्यस्थली अवश्य रही। विदेशी प्राचीन पर्यटकों, सम्राट अशोक, शाहजहाँ, शेरशाह सूरि, गुरुगोविन्दसिंह ने अपने आवागमन से इस स्थल को ऐतिहासिकता प्रदान की है। एतद्विषयक सामग्री का संयोजन कर उसे भी स्मारिका में प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया गया है।

भाषा-वैज्ञानिकों ने भोजपुरी भाषा का उद्भव एवं विकास पूर्वी प्राकृत-अपभ्रंश अथवा अर्धमागधी-प्राकृत से माना है। सारे संसार में इस भोजपुरी के बोलने वालों की संख्या लगभग १० करोड़ से भी अधिक बतलाई जाती है। उसकी बोली की मिठास, उसका शब्द-भाण्डार, उसके लोक-संगीत का मनमोहक माधुर्य, तथा हृदय के भावों की सहज प्रेषणीयता अपनी शानी नहीं रखती। उसके लोक-साहित्य को विश्व प्रसिद्ध फ्रांसीसी लोक-साहित्य की गरिमा से भी उत्कृष्ट श्रेणी का माना गया है। इस विषय की भी कुछ सामग्री स्मारिका में प्रस्तुत की जा रही है।

इस जनपद ने हिन्दी एवं भोजपुरी के अनेक कवियों को जन्म दिया है किन्तु यह दुर्भाग्य ही माना जायगा कि अनेक कवि आज विस्मृति के गर्भ में जा चुके हैं। साहित्य जगत उन्हें नहीं जानता। अपने अध्ययनशील मित्रों—प्रो. (डॉ.) दीनानाथसिंह एवं प्रो. (डॉ.) गदाधरसिंह के अनवरत प्रयत्नों से यहाँ ऐसे दो कवियों का परिचय हिन्दी जगत को दिया जा रहा है, जिनकी रचनाओं की खोज कर जनपद के गौरव की अभिवृद्धि के लिए उनपर शोध कार्य की तत्काल आवश्यकता है।

भोजपुर जनपद, जैसा कि पूर्व में कहा जा चुका है, साहित्य, संस्कृति, इतिहास एवं लोक-जीवन की दृष्टि से अन्यन्त समृद्ध है किन्तु उसके तथ्यों को मुखरित होने का अवसर अभी तक नहीं मिल सका है। अतः उसके लिए एक संक्षिप्त रूपरेखा भी इस स्मारिका में प्रस्तुत की जा रही है। अब वीर कुँवरसिंह विश्व विद्यालय की स्थापना तथा उसके लिए एक स्वप्नदृष्टा, भविष्य-दृष्टा, कुशल संचालक कुलपति डॉ. सुरेन्द्रनाथ सिंह के आगमन से यह विश्वास जगने लगा है कि भोजपुर जनपद के प्रच्छन्न-गौरव को प्रकाश मिल सकेगा।

आभार-स्मारिका के प्रकाशन के विचार से लेकर उसकी तैयारी तथा उसके प्रकाशित हो जाने तक हमें परामर्श देने तथा सहयोग करने वालों की एक लम्बी श्रृंखला है। यदि हमें उनका कृपापूर्ण सहयोग न मिलता तो स्मारिका का प्रकाशन सम्भव न होता। ऐसे सहयोगियों में समारोह समिति के अध्यक्ष प्रो. (डॉ.) दिनेन्द्रचन्द्र जैन का नाम प्रमुख है, जिनके परामर्शों ने हमारा मार्ग-दर्शन किया। प्राचार्य प्रो.(डॉ.) पारसनाथसिंह ने प्रकाशन के मार्ग में आने वाली कठिनाइयों को दूर कर इसके प्रकाशन का मार्ग सुकर बनाया है। प्रो. (डॉ.) चित्तरंजनकुमार सिंह ने स्मारिका को सुन्दर बनाने के लिए अपेक्षित सामग्री एकत्रित कर हमारी सहायता की है। अन्य सहयोगियों में प्रो. के.वी. वर्मा, प्रो. राजाराम सिंह आदि के नाम प्रमुख हैं, जिन्होंने हमारे कार्यों में सहायताएँ प्रदान की हैं।

हम अपने उन विज्ञापन-दाताओं के प्रति, विशेष रूप से स्ट्रा प्रोडक्ट्स (जे.के.कागज के निर्माता) के अत्यन्त आभारी हैं, जिन्होंने स्वस्थ विज्ञापनों के माध्यम से स्मारिका के प्रकाशन में आर्थिक सहयोग प्रदान कर हमारा उत्साहवर्धन किया है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रूफसंशोधन में सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्व विद्यालय के रिसर्च एशोसिएट डॉ. ऋषभचन्द्र फौजदार तथा तारा प्रेस वाराणसी के मालिक श्री रविशंकर पण्ड्या के प्रति भी हम अपना आभार व्यक्त करते हैं जिन्होंने वाराणसी की अशान्त परिस्थितियों में भी स्मारिका का मुद्रण कार्य स्वीकार किया तथा तत्परता से उसका प्रकाशन समयानुसार कर दिया।

प्रो. (डॉ.) राजाराम जैन
प्रधान सम्पादक

पूर्व-युनिवर्सिटी प्रोफे. (प्राकृत) एवं
अध्यक्ष-स्नातकोत्तर संस्कृत-प्राकृत विभाग
ह. दा. जैन कॉलेज, आरा (बिहार)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रकाशकीय

किसी भी संस्था के जीवन में पचास वर्ष की अवधि अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है। हरप्रसाद दास जैन महाविद्यालय की स्थापना उस क्रान्ति वर्ष सन् १९४२ में हुई जब सम्पूर्ण देश "अंग्रेजो भारत छोड़ो" और 'करो या मरो' के क्रान्तिकारी नारों से गूँज रहा था तभी इस जनपद के एक सपूत दानवीर स्वर्गीय हरप्रसाद दास जी जैन ने 'अज्ञानता मिटाओ' एवं 'ज्ञान दीप जलाओ' की प्रबल भावना के साथ शैक्षणिक दृष्टि से अत्यन्त पिछड़े हुए इस जनपद में उक्त महाविद्यालय की स्थापना की। यह सुखद संयोग और आनन्दातिरेक का विषय है कि सन् १९४२ की क्रान्ति और इस महाविद्यालय की स्थापना का स्वर्ण जयन्ती वर्ष एक साथ मनाया जा रहा है। इस बात पर हम सभी प्रमुदित हैं।

सक्षम प्रशासन, समर्पित शिक्षकों, अनुशासित छात्र-छात्राओं और सबसे बढ़कर जन सहयोग के बलपर इस महाविद्यालय ने अपनी स्थापना के चन्द वर्षों में ही न केवल बिहार अपितु पूरे देश में अपना एक विशिष्ट स्थान बना लिया। शिक्षण, शोध एवं इनसे जुड़े अन्य क्रिया कलापों में यहाँ के शिक्षकों एवं विद्यार्थियों ने अनुकरणीय उपलब्धियाँ अर्जित कीं। आज भी देश के कोने-कोने तथा विदेशों में भी यहाँ के शिक्षक एवं विद्यार्थी इसके गौरव को बढ़ा रहे हैं।

सन् १९६२ में इस महाविद्यालय ने मगध विश्वविद्यालय का प्रथम अंगीभूत महाविद्यालय बनने का गौरव प्राप्त किया परन्तु तभी से कतिपय भौतिक विवशताओं के कारण इसकी अपेक्षित प्रगति अवरुद्ध हो गई। महाविद्यालय के शिक्षकों एवं जनपद के प्रबुद्ध जनों के अथक प्रयास के फलस्वरूप सन् १९७२-७३ एवं १९८३-८४ से क्रमशः यहाँ सभी संकायों में स्नातकोत्तर कक्षाओं का अध्यापन प्रारम्भ हुआ। इससे इस जनपद में उच्च शिक्षा के विकास-विस्तार में एक नये अध्याय की शुरुआत तो अवश्य हुई परन्तु इस महाविद्यालय की भौतिक प्रगति को कोई विशेष गति नहीं मिल सकी। महाविद्यालय का स्वर्णिम अतीत आज विभिन्न समस्याओं के अन्धकार में मद्धिम-सा-पड़ता जा रहा है फिर भी हम उसके स्वर्णिम भविष्य के प्रति आशावान् हैं।

वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय की स्थापना से नई आशा का संचार हुआ है। हमें दृढ़ विश्वास है कि जन-सहयोग, शिक्षकों की लगन एवं विद्यार्थियों के उत्साह और महाविद्यालय के हितैषियों एवं अभिभावकों की कृपा से महाविद्यालय अपने स्वर्णिम अतीत की उँचाईयों को भी लाँघ पाने में सक्षम होगा।

अन्त में हम प्रो. (डॉ) राजाराम जैन के प्रति अपना आभार व्यक्त करते हैं जिन्होंने समिति के अनुरोध को स्वीकार किया तथा अपने अत्यन्त व्यस्त कार्यक्रमों के वावजूद भी हमारे महाविद्यालय, आरानगर, शाहाबाद तथा भोजपुर जनपद सम्बन्धी महत्वपूर्ण सामग्री तैयार कर इस स्मारिका को महनीय बनाया । वस्तुतः यह स्मारिका के साथ-साथ हमारे महाविद्यालय तथा भोजपुर जनपद से सम्बन्धित एक महत्वपूर्ण सन्दर्भ ग्रन्थ अथवा संक्षिप्त क्षेत्रीय इतिहास ग्रन्थ भी बन गया है। इस दिशा में उनका परिश्रम अत्यन्त सराहनीय एवं महाविद्यालय तथा भोजपुर जनपद के प्रति उनकी ममता एवं श्रद्धा-भावना अनुकरणीय है।

29.12.92

पारस नाथ सिंह
प्राचार्य
ह.दा. जैन महाविद्यालय, आरा

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Central Committee for Golden Jubilee Celebrations

Chairman	—Dr. D. C. Jain(Com. Dept.)
Deputy Chairman	—1. Prof. B. Alam (Eng. Dept.)
	2. Prof. K.D. Tiwary (Eng. Dept.)
Convener	—Dr. C.K. Singh (Zool. Dept.)
Members	—1. Dr. P.N. Singh, Principal (Ex.-Officio)
	2. Dr. S.P. Srivastava (Zool. Dept.)
	3. Dr. S. Pandey (Econ. Dept.)
	4. Prof. M. Singh (Eng. Dept.)

Reception Committee

Chairman	— Dr. P.N. Singh, Principal
Members	— 1. Head-every depts. of College
	2. Head-every depts. of P.G. Centre
	3. All Officials and members of Central Committee
	4. President, Teachers' Association of the College
	5. Secretary, Teachers' Association of the College
	6. President, Non-teaching Assoc. of the College
	7. Secretary, Non-teaching Assoc. of the College
	8. Prof. A.D. Tripathy, P.G. Dept. of Econ.
	9. Dr. P.N. Singh, Econ. Dept.
	10. Dr. R. B. Singh, Chem. Dept.
	11. Sri D.P. Sinha, Secretary, Fed. Non. Teach.
	12. Sri S.P. Sinha—S.O.Acctt.(Office)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Souvenir Cum Magazine Publication Committee Editorial Board :

Chairman — Dr. R.R. Jain (Sans. Prak. Dept) (Retd.)
Chief Editor — Dr. C.B. Tiwary (Hindi Dept.)
Managing Editor — Dr. P.N. Singh (Econ. Dept.)
Convener — Prof. Tapeshwar Prasad (Eng. Dept.)
Member — 1. Dr. D.K. Sinha (Eng. Dept.)
2 Dr. T. Rizvi (Urdu Dept.)
3. Dr. S.N. Jha (Sans. Dept.)
4. Dr. U.S. Pandey (Chem. Dept.)
5. Dr.. D.K. Tiwary (Com. Dept.)

Debate & Essay Committee :

Chairman — Prof. R.J. Singh (Engl. Dept.)
Convener — Dr. N.N. Singh "Neeraj" (Hindi Dept.)
Members — 1. Prof. R.P. Roy (Hindi Dept.)
2. Prof. B.M. Ojha (Pol. Sci.)
3. Dr. D.N. Singh (P.G. Hindi Dept.)
4. Dr. Gupteshwar Singh (Hindi Dept.)
5. Dr. Purnendu Bhushan (Botany Dept.)

Old Boys Committee :

Chairman — Prof. R.N. Tiwary (Retd.) Hindi Dept.
Convener — Prof. S.S. Choubey (Geog. Dept.)
Member — 1. Prof. Arun Prakash (Math Dept.) Retd.
2. Prof. N. Prasad (Geog. Dept.) Retd.
3. Prof. A. Hakim (Zool. Dept.)
4. Prof. S.N. Pandey (Chem. Dept.)
5. Prof. R.C. Jain (P.G. Chem. Dept.)
6. Sri Bharat Pd. (S.O. Office)

Accomodation and Conveyance Committee :

Chairman — Prof. C.D. Roi (Prak. Dept.)
Convener — Dr. S.N. Singh (Econ. Dept.)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

1. Dr. Mahesh Singh (Phil. Dept.)
2. Prof. C.B. Singh (Phil. Dept.)
3. Prof. A. Singh (Pol. Sc. Dept.)
4. Dr. R.P. Singh (Eco. Dept.)
5. Dr. K.N. Tiwary (Zool. Dept.)
6. Dr. R.R. Singh (Zool. Dept.)

Video & Photography Committee :

Chairman — Prof. Kr. Balwant Singh (Zool. Dept.) Retd.
Convener — Dr. D. Neogi (Chem. Dept.)
Member — 1. Dr. P. N. Singh (Eco. Dept.)
2. Dr. S. Sharan (Zool. Dept.)
3. Dr. A. Kumar (Bot. Dept.)
4. Dr. A. K. Singh (Bot. Dept.)

Cultural Programme Committee :

Chairman — Prof. R.P. Sinha (P.G. Psych. Dept.)
Convener — Prof. Balram Singh (Phy. Dept.)
Member — 1. Prof. S.N. Jha (Sans.)
2. Prof. K.N. Jha (Phil. Dept.)
3. Sri Z. Hassan (Phy. Dept.)
4. Sri R.K. Singh (Chem. Dept.)

Sports Committee :

Chairman — Dr. K.D. Dubey (Phy. Dept.)
Convener — Dr. K.N. Singh (Chem. Dept.)
Members — 1. Dr. L.A.K. Saran (Chem. Dept.)
2. Prof. N.P. Sinha (Chem. Dept.)
3. Prof. Satish Kumar (Bot. Dept.)
4. Prof. S.D. Singh (Phy. Dept.)
5. Dr. V.K. Singh (Econ. Dept.)
6. Dr. B.P. Bhagat (Zool. Dept.)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Indoor Sports Committee :

Chairman — Prof. R.P. Singh (Eng. Dept.)
Convener — Prof. S.S. Choubey (Geog. Dept.)
Member — 1. Prof. N.B. Sharan (Geog. Dept.)
2. Dr. S.K. Singh (Geog. Dept.)
3. Dr. R.R. Singh (Zool. Dept.)
4. Dr. S.N. Singh (Econ. Dept.)

Kavi Sammelan & Mushaira Committee :

Chairman — Prof. S.D. Rai (Eng. Dept.)
Convener — Prof. S.M.T. Rizvi (Urdu Dept.)
Members — 1. Prof. Tajuddin "Tajpyami" (Geog. Dept.)
2. Prof. Mithileshwar Pd. (Hindi Dept.)
3. Prof. Gupteshwar Singh (Hindi Dept.)
4. Prof. Rabindra Kumar (Hindi Dept.)
5. Prof. N.N. Singh "Neeraj" (Hindi Dept.)

Refreshment Committee :

Chairman — Prof. R.N. Mishra (Phil. Dept.)
Convener — Prof. C.B. Singh (Phil. Dept.)
Member — 1. Prof. S.N. Tiwary (Phil. Dept.)
2. Prof. Arbind Kumar (Botany Dept.)
3. Prof. C.S. Singh (Com. Dept.)
4. Prof. S.N. Pandey (Chem. Dept.)
5. Prof. I.D. Singh (Geog. Dept.)
6. Sri. B.P. Srivastava (Office)
7. Sri Jairam Pd. Singh (Office)

Science Exhibition Committee :

Chairman — Prof. S.N. Singh (Phy. Dept.)
Convener — Dr. A. Hakim (Zool. Dept.)
Member — 1. Prof. A.B. Roy (Phy. Dept.)
2. Prof. Mahendra Singh (Phy. Dept.)
3. Dr. S.A. Achari (Chem. Dept.)
4. Dr. K.M. Singh (Chem. Dept.)
5. Dr. K.N. Tiwary (Zool. Dept.)
6. Dr. K. B. Verma (Zool. Dept.)
7. Dr. Anand Pd. (Bot. Dept.)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

8. Prof. Abhay Kr. Singh (Bot. Dept.)
9. Prof. A.D.N. Singh (Psych. Dept.)
10. Dr. S.K. Singh (Geog. Dept.)

Refreshment Committee : (For Females) :

Members — 1. Prof. (Mrs.) Reeta Singh (Hist. Dept.)
2. Prof. (Mrs.) Lateeka Verma (Psych. Dept.)
3. Prof. (Mrs.) Nameeta Singh (Eng. Dept.)
4. Mrs. Sushila Singh (Psych. Dept.)
5. Mrs. Shanti Kumari Verma (Psy. Dept.)

Discipline Committee :

Chairman — Prof. R.N. Mishra (Phil. Dept.)
Convener — Prof. R.P. Pandey (Phy. Dept.)
1. Prof. Arbind Kumar (Bot. Dept.)
2. Prof. S.N. Tiwary (Phil. Dept.)
3. Prof. C. S. Singh (Com. Dept.)
4. Prof. V.K. Singh (Com. Dept.)
5. Prof. U.D. Pandey (Sans. Dept.)
6. Prof. A. Singh (Pol. Sc. Dept.)
7. Prof. B.B. Singh (Eng. Dept.)
8. Prof. I.D. Singh (Geog. Dept.)
9. Prof. R.B. Singh (Chem. Dept.)

Publicity Committee :

Chairman — Dr. P.N. Singh (Econ. Dept.)
Convenir — Dr. A. Ghosh (Phy. Dept.)
Members — 1. Prof. M.A. Muzaffar (Urdu Dept.)
2. Prof. D.K. Sinha (Eng. Dept.)
3. Prof. M.N. Singh (Econ. Dept.)

Principal
H.D. Jain College, Arrah

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विषय-सूची

	पृष्ठ संख्या
१. मंगल कामना-सन्देश	४-७
२. सम्पादकीय	८-१०
३. प्रकाशकीय	११
४. Central committee for Golden Jubilee Celebrations	१२-१६
५. ह.दा. जैन कालेज : प्रगति के पहिए पर—प्रो. पारसनाथ सिंह	१७-२४
६. वीर बाबू कुँअरसिंह : एक प्रज्वलित व्यक्तित्व—डॉ. गदाधर सिंह	२५-२८
७. Role of Sri Adinath Trust In Deucational Development and Social Welfare—**Prof. Raja Ram Jain**	२९-३०
८. आरा नगर : पुराणेतिहास के दायरे में— डॉ. (श्रीमती) विद्यावती जैन	३१-३५
९. आरा नगर के चार प्राचीन गौरव ग्रन्थागार	३६-३८
१०. आरा नगर के दो विस्मृत साहित्यकार	३९-४०
११. आरा नगर के विकास में स्थानीय जैन समाज की भूमिका— प्रो. राजाराम जैन	४१-४२
१२. भोजपुर जनपद का ऐतिहासिक महत्व— डॉ. भगवतशरण उपाध्याय	४३-४५
१३. भोजपुर के विस्मृत निर्गुण कवि देवाराम-बाबा— प्रो. दीनानाथ सिंह	४६-४८
१४. भोजपुर के रीति-परम्परा के एक विस्मृत हस्ताक्षर : कवि पं. दिवाकर भट्ट—डॉ. गदाधर सिंह	४९-५१
१५. शाहाबाद की आधुनिक हिन्दी-साहित्य सेवा—डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री	५२-५६
१६. आरा नगर का वर्तमान रंगमंच— विजय प्रकाश	५७
१७. हिन्दी का उद्‌विकास और भोजपुर की साहित्यिक प्रगति— डॉ. राजाराम जैन	५८-६१
१८. भोजपुर के रंगकर्मी-अभिनेता और निर्देशक : कवि भिखारी-श्रीमहेश्वराचार्य	६२-६५
१९. भोजपुरी लोक-साहित्य— डॉ. बनारसीप्रसाद भोजपुरी	६६-७१
२०. भोजपुरी भाषा एवं लोक साहित्य : इतिहासकारों की दृष्टी में	७२-७३
२१. भोजपुर एवं भोजपुरी के वीकास के लिए अपेक्षित दिशाएँ— डॉ. राजाराम जैन	७४-७५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

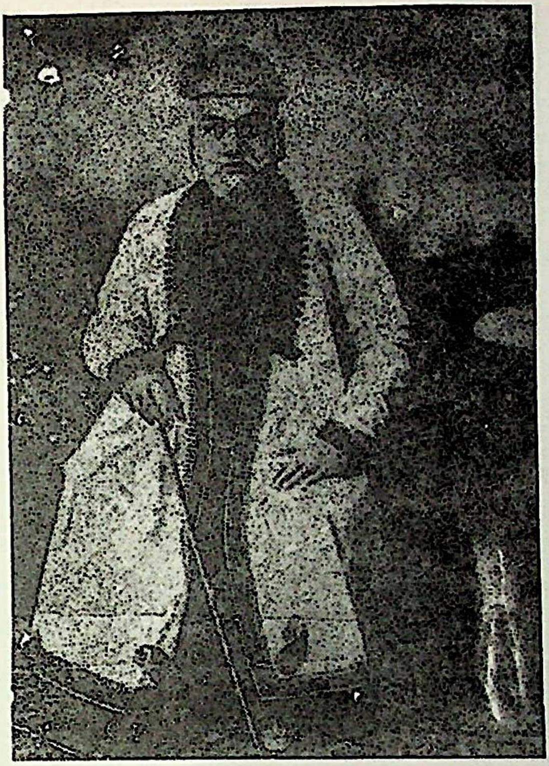

श्री. हरप्रसाददास जैन
(जन्म-८.४.१८४८
स्वर्गगमन- १७.९.१९२० ई.)
श्री आदिनाथ ट्रष्ट के संस्थापक तथा उसके माध्यम से ह.दा. जैन कॉलेज आरा एवं अन्य अनेक शिक्षा एवं सामाजिक संस्थाओं के संस्थापक,
दीन हीन शोषितों अभावग्रस्तों एवं पीड़ितों के मसीहा, भोजपुर के उदार चेता, दानवीर, शिक्षा-प्रेमी, समाजसुधारक तथा आरा नगर एवं भारत के प्रमुख तीर्थ स्थलों में अनेक कलाकृतियों के निर्माता,

स्वर्गीय श्री. निर्मल कुमार जी जैन आरा के शासी-निकाय के प्रथम अध्यक्ष, जिन्होंने अपने चातुर्य से साधनाभावों के मध्य भी विद्यारथ को गति प्रदान की।

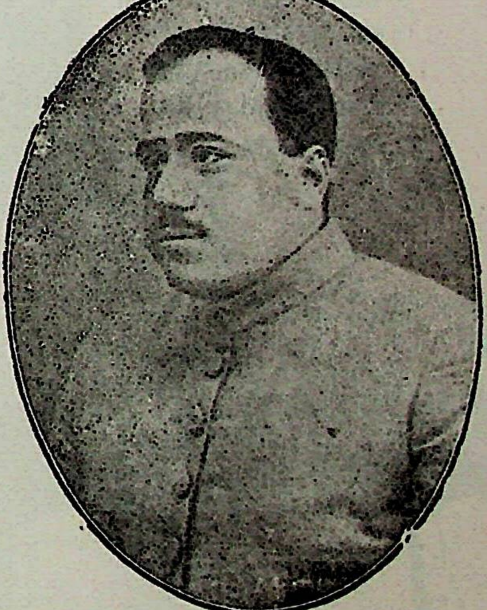

स्वर्गीय श्री चक्रेश्वर कुमार जी जैन आरा कॉलेज के शासी-निकाय के दूसरे अध्यक्ष, जिनके कुशल प्रशासन एवं दूर दृष्टि ने कॉलेज को बिहार के उच्च शिक्षा संस्थानों में अग्रगण्य बना दिया।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

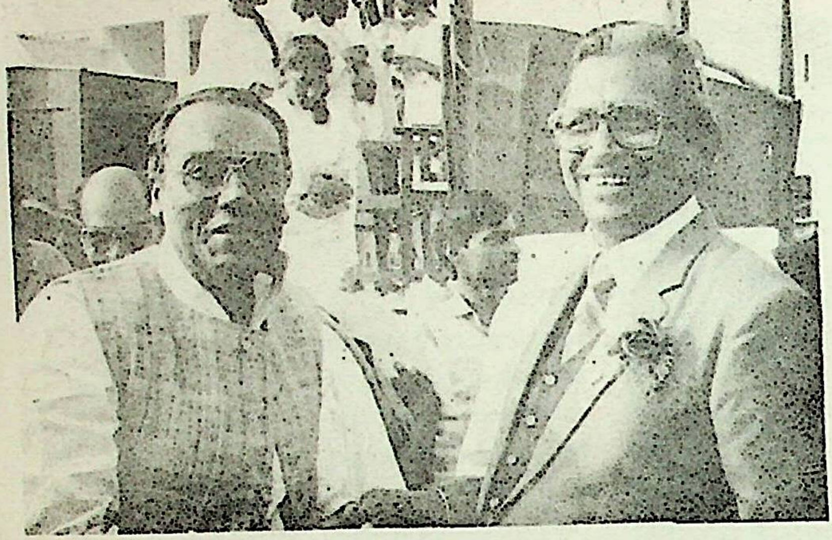

Chairman of the College Golden Jubilee Celebrations, 1993— Prof. (Dr.) D. C. Jain (right) with Sri S. S. Prasad, Distt. Judge, Arrah, the chief guest of College Foundation Day 1990.

—प्राचार्य प्रो.(डॉ) पारसनाथ सिंह
—महाविद्यालय के विकास के लिए अहर्निश चिन्तित, तथा
—महाविद्यालय की स्वर्ण जयन्ती समारोह की तैयारी के लिए सभी प्रकार के उदार सक्रिय सहयोग एवं संरक्षण देने के लिए सदैव तत्पर

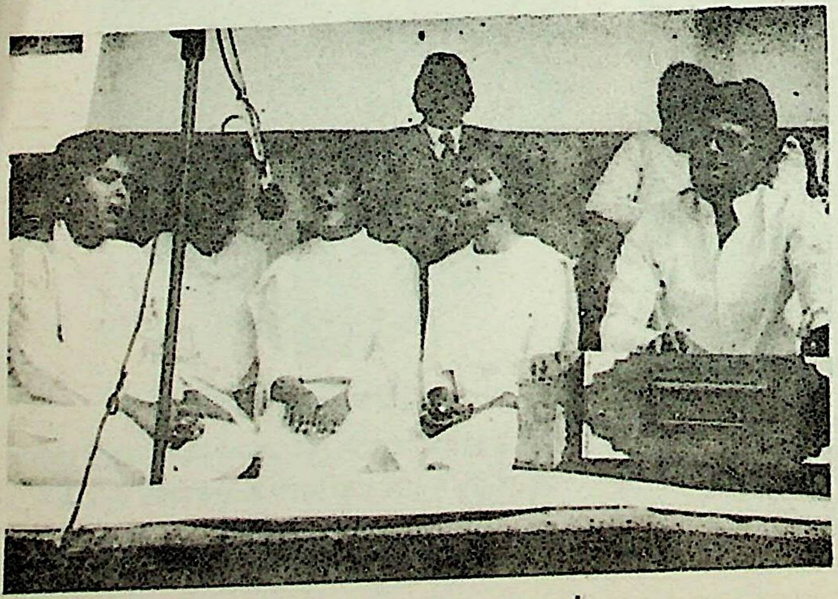

कॉलेज के स्थापना-दिवस (२१ जनवरी १९९० के शुभावसर पर कॉलेज का कुलगीत प्रस्तुत करती हुई छात्राएं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

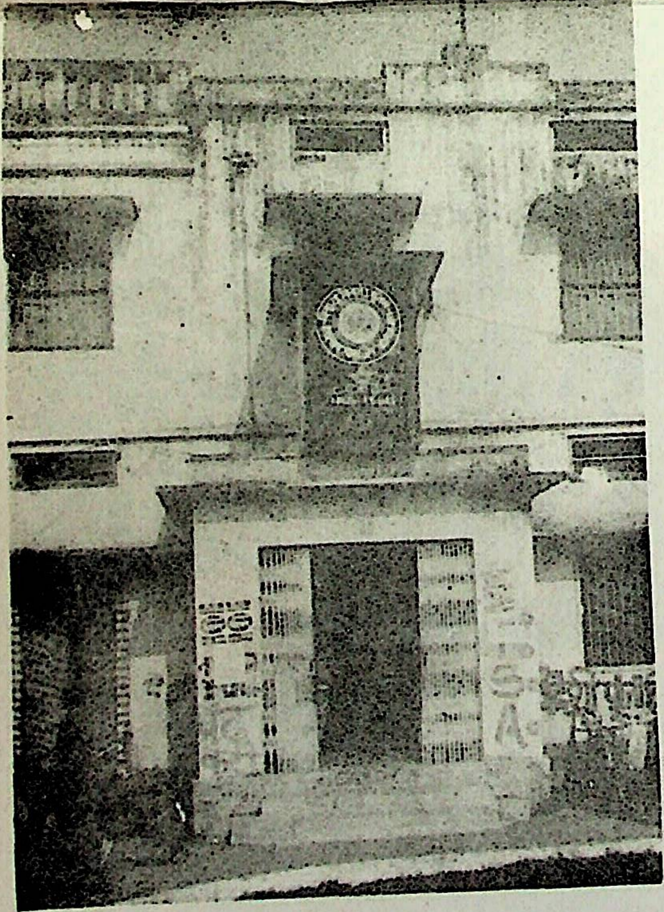

प्राचार्य कक्ष

जो पिछले ५० वर्षों से कॉलेज के सर्वोच्च अनुशासन, प्रशासन और भारत-विख्यात प्रतिष्ठित कार्यलापों का जीवित इतिहास है

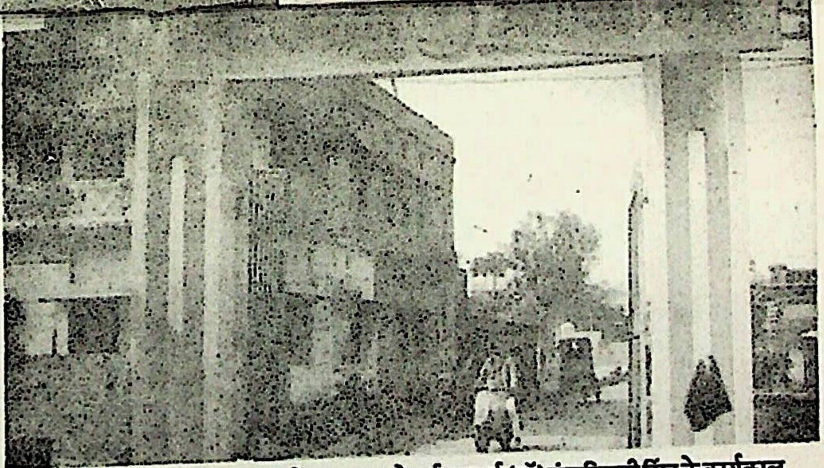

महाविद्यालय का प्रधान प्रवेश द्वार—जो पूर्व प्राचार्य (डॉ) कुंजबिहारी सिंह के कार्यकाल (सन् १९७८-८९) के ऐतिहासिक स्मारक का रूप ग्रहण कर रहा है।

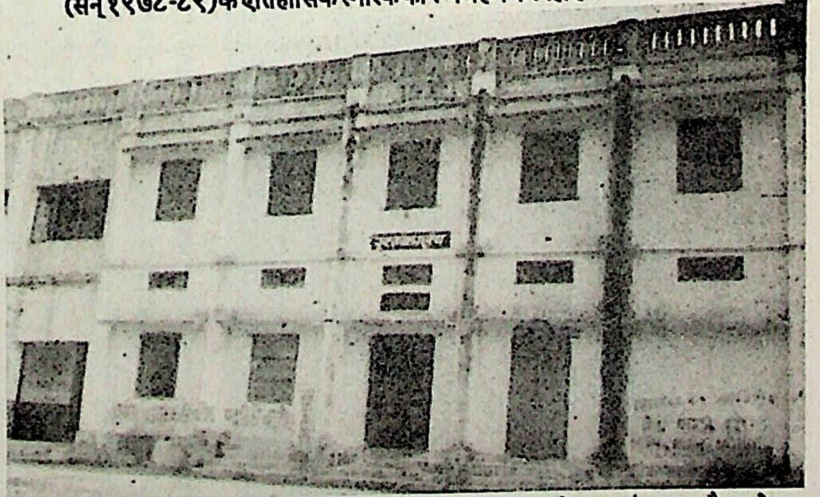

प्रधान ग्रन्थागार—जो अनेक दुर्लभ सन्दर्भ ग्रन्थों, शोध-पत्र-पत्रिकाओं का ज्ञान भाण्डार है—जो अपने संगृहीत लगभग तीन लाख सर्वोपयोगी ग्रन्थों एवं पत्र-पत्रिकाओं के कारण ज्ञान-पिपासुओं तथा शोधकर्त्ताओं के आकर्षण तथा ज्ञान-साधना का प्रमुख केन्द्र रहा है। ग्रन्थागार के दाएँ पार्श्व में दर्शन विभाग, एवं वाएँ पार्श्व में संस्कृत-प्राकृत विभाग है। ऊपरी मंजिल पर बाईं ओर सेण्ट्रल बैंक आफ इण्डिया की शाखा, कॉलेज-वाचनालय तथा दाईं ओर भौतिक विज्ञान की प्रयोगशाला है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

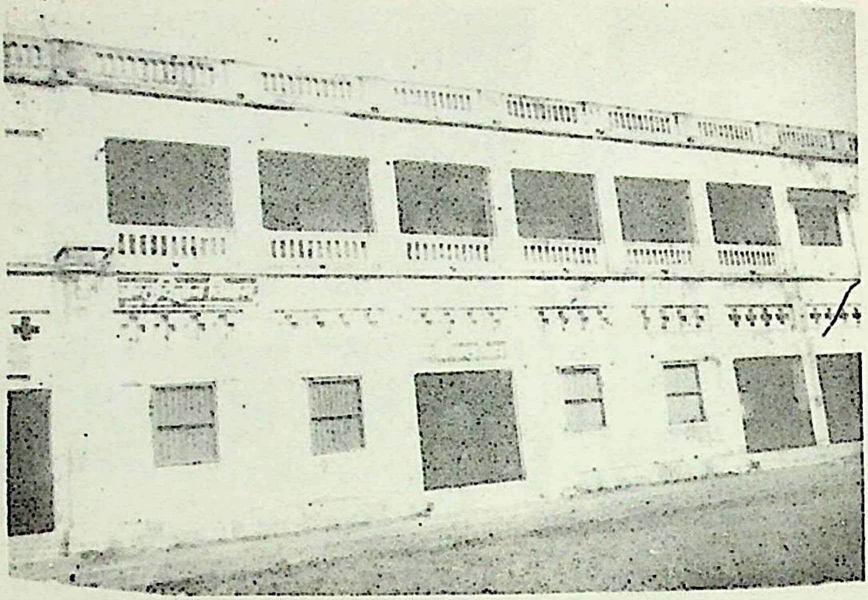

जन्तु विज्ञान विभाग (ऊपर) तथा वनस्पतिशास्त्र विभाग (नीचे) जिन्होंने कॉलेज के अनेक छात्र छात्राओं को मेडिकल-शिक्षा प्राप्त करने की प्रेरणा दी।
उसके दाएँ पार्श्व (नीचे) भौतिक विज्ञान विभाग है तथा बाएँ पार्श्व में कॉलेज का दो मंजिला ऑडोटोरियम है।

प्रो. डॉ. राजाराम जैन
पूर्व-यूनिवर्सिटी प्रो. (प्राकृत) तथा
अध्यक्ष, स्नातकोत्तर सं. प्रा. विभाग,
ह. दा. जैन कालेज, आरा
सम्पादक— स्वर्ण जयन्ती स्मारिका

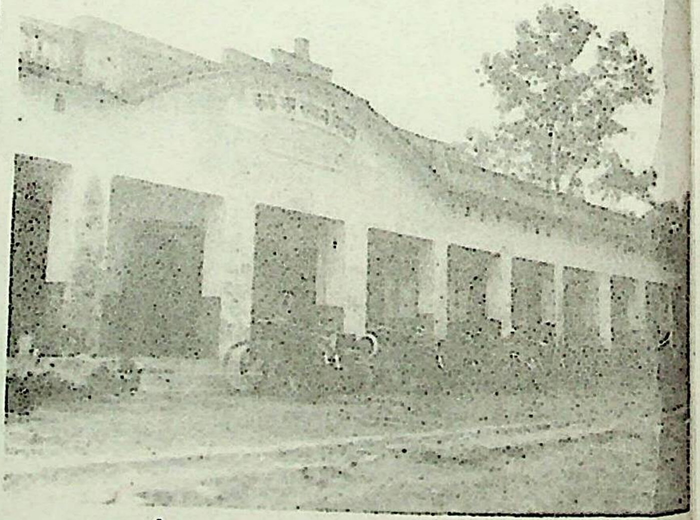

कला और वाणिज्य-कक्ष—

आज भले ही वह पुराने फैशन की बिल्डिंग हो गई हो किन्तु उसकी छ
नीचे अध्ययन कर कॉलेज के अनेक छात्र शिक्षाविद् कुलपति, उपकुलप
प्राचार्य, आचार्य एवं आई.ए.एस., आई. पी. एस., एम.पी., एम.एल.ए., सम
सेवक, डाक्टर, इंजिनियर, वैज्ञानिक, एवं उद्योगपति, के रूप में प्रतिष्ठि
हुए हैं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ह. दा. जैन कॉलेज : प्रगति के पहिए पर

प्रो. पारसनाथ सिंह

समृद्धों को समृद्ध बनाना, विकासशीलों को विकसित करना, तथा शिक्षितों को शिक्षित करने में कोई चमत्कार नहीं। चमत्कार तो वह है, जब कोई निम्न स्तर की अभावग्रस्त दीन-हीन जनता को सम्बल प्रदान करता है, उनमें आत्म-विश्वास की भावना जागृत करता है, अविकसितों को विकासशील बना देता है और अशिक्षितों को शिक्षित बनाने के लिए प्रतिज्ञाबद्ध होकर क्रियाशील हो जाता है। स्वनामधन्य बाबू हरप्रसाद्दास जी ने अपने जीवन में यही किया।

—सम्पादक

आज से लगभग ९ दशक पहले की घटना है, एक व्यक्ति अपने भवन की छत पर एकाकी खड़ा था। उस दिन वह बहुत चिन्तित एवं उदास था। वह सुदूरवर्त्ती इलाकों का भ्रमण करने के बाद दोपहर में ही घर लौटा था। वहाँ उसने गरीबी एवं पिछड़ेपन का नंगा नाच स्वयं देखा था। वहाँ के निवासियों के रहने के लिये आवास नहीं, तन ढकने के लिए वस्त्र नहीं और एक जून का भोजन जुटाने का सामर्थ्य भी नहीं। मायूस चेहरे वाले उन बेचारों के लिए प्रारम्भिक शिक्षा एवं चिकित्सा व्यवस्था का तो कोई प्रश्न ही नहीं था। वह अंग्रेजी-शासन का काल था। प्रथम भारतीय स्वतन्त्रता संग्राम के लगभग ६०-६२ वर्ष बाद उस समय अंग्रेजी-शासन की जड़ें मजबूती पकड़ चुकीं थी।

अपने पिछड़े प्रक्षेत्र की तुलना उक्त व्यक्ति अपनी पिछली दक्षिण एवं पश्चिम भारतीय-यात्राओं से करने लगा। वहाँ उसने स्वयं देखा था कि वहां के ग्राम, नगर कितने खुशहाल एवं अन्य शिक्षा आदि सुविधाओं में कितने सम्पन्न हैं। वह अपने जिले की तरक्की के लिए कुछ कर गुजरने की उसी समय दृढ़ प्रतिज्ञा कर लेता है। पाठकों को जिज्ञासा हो रही होगी कि कौन था वह मसीहा, जो आम-जनता की भलाई के विषय में भी सोच रहा था और मुट्ठी बाँधकर उसके लिए दृढ़ इरादा भी कर रहा था। वह मसीहा अन्य कोई नहीं, हम और आप जैसा हाड़-माँस का बना वही व्यक्ति था, जिसे लोग बाबू हरप्रसाददास जैन के नाम से जानते हैं और जिसने आगे चलकर यश एवं ख्याति की कामना किए बिना ही अपने प्रक्षेत्र के विकास के लिए एक ऐसे कल्पवृक्ष का बीजारोपण किया था, जिससे आज आरा नगर ही नहीं, भोजपुर, रोहतास एवं बक्सर जिला ही नहीं, बल्कि सारा भारत भी लाभान्वित हुआ है।

बाबू हरप्रसाददास जी भले ही नगरसेठ थे, रईस एवं जमीन्दार थे और धनकुबेर भी। किन्तु वे किंचितमात्र भी शोषक एवं स्वार्थी न थे। भौतिकता की चकाचौंध से परे वे लोगों के अभावों एवं विपन्नता के प्रति प्रारम्भ से ही भावुक, संवेदनशील, सहज, सरल एवं उदार स्वभाव के धनी रहे। उन्होंने धनार्जन किया था अवश्य, किन्तु उस सम्पत्ति को उन्होंने राष्ट्र एवं समाज का माना। अपने को उसका ट्रस्टी समझा। उसे उन्होंने अपनी व्यक्तिगत सम्पत्ति कभी नहीं माना। कैसे मानते? बिहार के महान् सपूत तीर्थंकर महावीर के सर्वोदय-सिद्धान्त को, जहाँ उन्होंने अपने जीवन में उतारा, वहीं वेअण्णा साहब डी. के. कर्वे, ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, अब्राहम लिंकन, बुकर टेलिफैरो वाशिंगटन, हेनरी डेविड थॉरो, इमर्सन एवं टाल्स्टाय के जीवनचरितों से भी मन्त्रमुग्ध रहे और उन्हीं की राह पर चलकर वे राष्ट्र एवं समाज की सेवा करना चाहते थे। कटिबद्ध होकर उन्होंने यही कार्य किया भी।

वस्तुतः वह समय ही ऐसा था। भारत में अंग्रेजों का आगमन, ईस्ट इण्डिया कम्पनी का शासन तथा उनके अन्याय एवं अत्याचारों ने भारतीय-जनता को निराश, उदास एवं उत्तेजित कर दिया था, जिसका नेतृत्व किया आरा नगर के ही एक स्वाभिमानी वीर सैनिक मंगल पाण्डेय ने, जिसकी अनहोनी वीरता का

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

फल था—सन् १८५७ की देशव्यापी क्रान्ति का प्रथम प्रभावी शंखनाद। उसी समय वीर कुँवरसिंह ने भी अपने शौर्य-वीर्य का परिचय देकर खूनी अंग्रेजों को आतंकित कर नव-जागरण का बिगुल बजाया, तो उसी वीर-धरती पर हमारे चरित नायक बाबू हरप्रसाददास ने भी अपने प्रक्षेत्र में शैक्षिक एवं सामाजिक-विकास का बिगुल बजाया। उसके लिए हरप्रसाददास को अपनी समस्त चल-अचल सम्पत्ति का दान करने में एक क्षण भी नहीं लगा। उन्होंने अपने विश्वस्त मित्रों को बुलाकर सलाह-मशविरा किया और सन् १९१८ ई. में एक वसीयतनामा तैयार कराकर प्रथम तीर्थंकर आदिनाथ के नाम पर श्रीआदिनाथ ट्रस्ट की स्थापना की और उसके माध्यम से आम जनता की भलाई तथा सामाजिक-विकास की दिशा में विविध योजनाएँ तैयार कराई।

धर्मशाला, पाठशाला, ग्रन्थालय, दानशाला, चिकित्सालय, वाचनालय और पणशाला के साथ-साथ निचले स्तर से सामाजिक विकास की प्रक्रिया को ध्यान में रखते हुए प्रारम्भ में प्रारम्भिक विद्यालयों की स्थापना का प्रावधान ट्रस्ट की ओर से किया गया। किसी कॉलेज की स्थापना की व्यवस्था उसमें नहीं थी, किन्तु आरा नगर के एक शिक्षाशास्त्री तथा अवकाश-प्राप्त डिप्टी मजिस्ट्रेट श्री सुपार्श्वदास गुप्ता की प्रेरणा एवं सत्प्रयत्नों से सन् १९१९ में उच्चशिक्षा प्रसार की दृष्टि से एक कॉलेज की स्थापना के लिए भी बाबू हरप्रसाददास जी ने प्रावधान कर उसके लिए ६०,००० /- का दान दे दिया।

कुछ विशेष कठिनाईयों के कारण कॉलेज की स्थापना सन् १९४१ ई. तक नहीं हो सकी, किन्तु जनता की आवश्यकताओं को ध्यान में रखते हुए नगर के सुप्रसिद्ध विधिवेत्ता श्री. बाबू अवधबिहारी शरण (एडवोकेट), बाबू मुकुटधारी सिंह (अवकाश-प्राप्त डिप्टी मजिस्ट्रेट), श्री विजयकुमार जैन (अवकाश-प्राप्त डिप्टी-मजिस्ट्रेट) तथा श्री आदिनाथ ट्रस्ट के अन्य मानद सदस्यों के सहयोग से शीघ्र ही कॉलेज स्तर की पढ़ाई प्रारम्भ करने का निर्णय लिया गयाऔर सन् १९४२ के क्रान्तिवर्ष में वसन्तपंचमी के मंगल-दिवस पर २१ जनवरी को एक कॉलेज का शिलान्यास कर दिया गया। उसके संचालन के लिए श्रीआदिनाथ ट्रस्ट ने कुल मिलाकर १ लाख ५५ हजार की द्रव्यराशि की व्यवस्था की। दानवीर बाबू हरप्रसाददास जैन की स्मृति को अक्षुण्ण बनाए रखने के लिये कॉलेज का नामकरण उन्हीं के नामपर अर्थात् "हरप्रसाददास जैन कॉलेज" कर दिया गया।

सन् १९४५ में ह. दा. जैन कॉलेज के शासी-निकाय ने डुमरॉव नरेश महाराजा बहादुर श्री रामरणविजय प्रसाद सिंह जी से जैन कॉलेज के विकास के लिए सक्रिय सहयोग देने का विनम्र अनुरोध किया, जिसे उन्होंने सहर्ष स्वीकार किया और नगर के बीचों बीच २१ बीघा १० कट्ठा जमीन का एक टुकड़ा जैन कॉलेज को भेंट स्वरूप प्रदान कर दिया। उसी भूमि पर उन्हीं के नाम पर "जैन-कॉलेज होस्टल" नामका एक छात्रावास पहले से ही स्थित है। इधर यू.जी.सी. के आर्थिक सहयोग से एक नवीन छात्रावास का निर्माण भी इसी भूमि पर कराया गया है।

चूँकि तत्कालीन पूरे शाहाबाद जिले (वर्तमान भोजपुर, रोहतास एवं बक्सर जिले) में यही कॉलेज सर्वप्रथम संस्थापित कॉलेज था। अतः वहाँ के निवासियों को इससे बड़ा सन्तोष और राहत मिली।

सन् १९४५ में सारे बिहार में केवल एक ही विश्वविद्यालय कार्यरत था—पटना विश्व- विद्यालय। बिहार के समस्त कॉलेज उसी से सम्बद्ध थे। अतः ह.दा. जैन कॉलेज का भी उसी के साथ सम्बद्धन कराया गया तथा सर्वप्रथम कला एवं वाणिज्य संकायों के अन्तर्गत विषयों की पढ़ाई के लिए स्वीकृति मिली। तत्पश्चात् सन् १९५०-५१ में विज्ञान-संकाय के अध्यापन की भी स्वीकृति मिल गई। जनता की माँग को ध्यान में रखते हुए सन् १९४८ में दो लोकप्रिय विषयों-अर्थशास्त्र एवं हिन्दी तथा सन् १९५३ में राजनीति-विज्ञान में भी प्रतिष्ठा-वर्ग के शिक्षण के लिए स्वीकृति मिली।

बिहार में शिक्षा-विकास का क्रमिक चरण बढ़ा। कॉलेजों की संख्या भी बढ़ने लगी। इधर, पटना विश्वविद्यालय को Teaching-Cum-Residential University का दर्जा मिल गया। अतः सन् १९५२ में पटना में Teaching-Cum-Affiliating University के स्तर के बिहार विश्वविद्यालय की भी स्थापना की गई। इस कारण जैन कॉलेज का सम्बन्धन बिहार विश्वविद्यालय से हो गया।

बिहार वि. वि. से इसका नाता लगभग १० वर्षों तक रहा। तत्पश्चात् सन् १९६२ के प्रारम्भ में मगध विश्वविद्यालय की स्थापना की गई, जिसका प्रधान कार्यालय बोधगया (गया, बिहार) में था। उस समय जैन कॉलेज मगध विश्वविद्यालय से सम्बद्ध हुआ तथा उसके प्रक्षेत्र का प्राचीनतम, वरिष्ठतम तथा

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सुविधा-सम्पन्न कॉलेज होने के कारण ९ अप्रैल १९६२ को उसके कुलपति डॉ॰ कालीकिंकर दत्ता के द्वारा उसे मगध वि. वि. का प्रथम अंगीभूत कॉलेज घोषित किया गया।

कॉलेज का उत्तम परीक्षाफल, ख्यातिलब्ध शिक्षक, सुविधासम्पन्न प्रयोगशालाएं, समृद्ध ग्रन्थागार तथा चुस्त-दुरुस्त प्रशासन एवं अनुशासन देखकर मगध वि. वि. ने तीनों संकायों के अवशिष्ट सभी विषयों में प्रतिष्ठा-पर्यन्त अध्यापन किए जाने की भी स्वीकृति प्रदान कर दी। यही नहीं, बिहार सरकार के सन् १९७२ -७३ के विश्वविद्यालयों के प्रांगणों के बाहर "विश्वविद्यालय स्नातकोत्तर केन्द्र" खोलने के निर्णयानुसार इस प्रक्षेत्र की आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए मगध वि. वि. ने जैन-कॉलेज के प्रांगण में भी "मगध वि. वि. स्नातकोत्तर केन्द्र" की स्थापना कर दी तथा सर्वप्रथम दो विषयों में (अर्थशास्त्र एवं राजनीति-विज्ञान में) स्नातकोत्तर की पढ़ाई प्रारम्भ कर दी। तत्पश्चात् सन् १९८३ -८४ सत्र में विश्वविद्यालय केन्द्र के अन्तर्गत हिन्दी-साहित्य, मनोविज्ञानशास्त्र तथा रसायनविज्ञानशास्त्र में भी स्नातकोत्तर कक्षाओं को प्रारम्भ कर दिया गया।

कॉलेज की यह विकास कथा यहीं समाप्त नहीं हो जाती। प्रक्षेत्र की जनाकांक्षाओं को ध्यान में रखते हुए जैन कॉलेज में सन् १९८३-८५ सत्र से प्राकृत-भाषा एवं साहित्य विषय में और सन् १९८५-८७ सत्र से संस्कृत, इतिहास, वाणिज्य, दर्शनशास्त्र, अंग्रेजी, भूगोल, गणित, भौतिकशास्त्र, प्राणिशास्त्र, वनस्पतिशास्त्र, उर्दू एवं पर्शियन, विभागों में भी स्नातकोत्तर कक्षाओं की व्यवस्था कर दी गई। इस प्रकार हमारा कॉलेज सन् १९४२ ई. में जहाँ स्नातक-कक्षाओं से प्रारम्भ हुआ था, वहीं उसने सन् १९८६-८७ तक स्नातकोत्तर-कॉलेज बनने का गौरव प्राप्त किया।

जैन कॉलेज के शासी-निकाय ने उसके संस्थापक की आकांक्षाओं का निरन्तर ध्यान रखा। वह प्रक्षेत्र की युवा-पीढ़ी को केवल किताबी ज्ञान में ही समुन्नत नहीं बनाना चाहता था, अपितु व्यावहारिक क्षेत्र में भी उसे प्रशिक्षित करना चाहता था। अतः उसने अपने सीमित साधनों में भी अनुभवी एवं तद्विषयक अभिरुचि से सम्पन्न प्राध्यापकों की देख-रेख में एक कोओपरेटिव सोसायटी, टंकण-प्रयोगशाला, एथलेटिक क्लब तथा जिमनेशियम की स्थापना भी की और उनमें अनुभवी प्रशिक्षकों की नियुक्ति की। इससे कॉलेज के स्नातक छात्र-छात्राएँ उपाधि के साथ-साथ अपनी-अपनी रुचि के अनुसार स्वास्थ्यवर्धक एवं व्यावहारिक-ज्ञान प्राप्तकर कर्म क्षेत्र में उतरने लगे।

कॉलेज में अनुशासन बनाए रखने तथा दूर-दराज के इलाकों में रहने वाले छात्रों के दुख-सुख तथा सुविधाओं-असुविधाओं आदि की खोजखबर रखने के लिए आरा नगर तथा समीपवर्ती इलाकों को ८ प्रक्षेत्रों (प्रोक्टोरियल जोन्स) में विभक्त किया गया तथा चीफ प्रोक्टर के साथ प्रत्येक जोन पर एक-एक प्रोक्टर की नियुक्ति की गई। इस प्रकार कॉलेज में पढ़ने वाले हर छात्र-छात्रा के कार्य-कलापों का लेखा जोखा प्रोक्टरों के माध्यम से कॉलेज में रहने लगा, जो छात्रों के लिए तथा कॉलेज के लिए भी अनुशासन एवं प्रशासन की दृष्टि से हितकारी सिद्ध हुआ।

कॉलेज की स्थापना के प्रथम दशक में जबकि कहने को तो उसका शैशव काल ही था, किन्तु समय से पहले ही उसने प्रौढत्व के प्रथम चरण में कदम बढ़ा दिया था। इसका मूल कारण शासी-निकाय के प्रथम अध्यक्ष आरा-निवासी स्वनामधन्य श्री. निर्मलकुमार जैन थे, जिन्होंने जाति, धर्म एवं सम्प्रदाय की संकीर्णताओं से दूर रहकर कर्त्तव्यनिष्ठ, चरित्रनिष्ठ एवं अपने-अपने विषय के निष्णात विद्वान्-शिक्षकों की नियुक्ति की। यही कारण है कि यहाँ प्रो. वी.एम. अग्रवाल, डॉ. नलिन विलोचन शर्मा, प्रो. बी.बी. मजूमदार, प्रो. बी.बी. मुखर्जी, डॉ. एन.के. देवराज, डॉ. के.सी. गुप्ता, डॉ. परमहंसराय, प्रो. दि. वा. अग्निहोत्री, डॉ. नन्दलाल नड्डा, डॉ. अनुजकुमार धान, डॉ. शालिग्राम सिंह, डॉ. कुमार विमल, डॉ. परमेश्वर दयाल, प्रो. खुशालचन्द्र गोरावाला, प्रो. वंसरोपनलाल डॉ. सी.डी. सिंह, डॉ. भुवनेश्वर प्रसाद मिश्र, माधव, डॉ॰ रामप्रवेश सिंह, डॉ॰ योगेन्द्र कुमार जैन, डॉ॰ शिवनन्दन प्रसाद, डॉ॰ विमलकुमार जैन, प्रो. जगदीश पाण्डेय, प्रो. हरलाल दास गुप्त, प्रो. इकबालनारायण सिंह, जैसे शिक्षक नियुक्त हुए, जिन्होंने समर्पित भाव से अध्यापन कार्य तो किया ही, अपने मौलिक शोध कार्यों से भी अपने-अपने विषयों के क्षेत्र में नवीन चिन्तनपूर्ण अवदान दिए तथा विद्यामन्दिर के रूप में जैन कॉलेज को भारत के आदर्श गौरवपूर्ण शिक्षा-संस्थानों के मानचित्र में सुर्खियों में प्रतिष्ठापित करा दिया।

उस समय का माहौल यह था कि यदि कोई प्राध्यापक अपने शोध कार्य में आर्थिक विपन्नता का अनुभव करता था और वह शासी-निकाय को अपनी कठिनाई बतलाता था, तो वह उसे समुचित आर्थिक अनुदान देने में हीला-हवाला नहीं करता था। यह अनुदान तीन प्रकार का होता था—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

— सन्दर्भ संग्रह हेतु बाहिरी ग्रन्थालयों एवं शोध संस्थानों में भ्रमण करने हेतु कर्त्तव्यावकाश के साथ उदार आर्थिक अनुदान।

— कॉलेज-ग्रन्थागार में उपयोगी सन्दर्भ-ग्रन्थों एवं शोध-पत्रिकाओं के क्रय की उदार व्यवस्था।

— शोधार्थियों के लिए कान्फ्रेंसों एवं सेमिनारों में शोधपत्र वाचन हेतु कर्त्तव्यावकाश के साथ उदार आर्थिक अनुदान।

अंगीभूत होने के पूर्व जैन कॉलेज के प्राध्यापकों को शोषित होने अथवा अपमानित होने का कभी भी अनुभव नहीं हुआ। क्योंकि केन्द्र या प्रान्तीय सरकारों ने प्राध्यापकों का जब भी जो भी वेतन एवं भत्ता आदि निर्धारित किया, उसे देने से शासी-निकाय ने कभी भी आगा-पीछा नहीं किया। पुरानी पीढ़ी के प्राध्यापक आज भी उस समय की याद प्रमुदित चित्त होकर किया करते हैं और उसके सुखद संस्मरण सुनाते रहते हैं। अभी कुछ वर्ष पूर्व जैन कॉलेज के अवकाश-प्राप्त प्रो. उदयप्रकाश श्रीवास्तव (पूर्व विभागाध्यक्ष अर्थशास्त्र विभाग) कहते है कि —

Thus right from the very start of the college its rein of administration was in the hand of very able persons who were always concious not to make the institution a part of their private property or to convert it into a sectarion one in matters of appointment of Principal and teachers of the college. They welcomed and invited only teachers of merit, character and integrity. This was the key of the rapid growth of the college. Its masters did not confine themselves even to the narrow range of provincialism and casteism. As such they appointed teaches from outside the states. At the some time they were to eager to give berth to local talents who were found qualified for the job. If we look to the education horizon, we can without telescopic eyes see a galaxy of brilliant stars of educationist emitting light of knowledge to far distance.

श्री निर्मलकुमार जी उस समय बिहार के प्रधान उद्योगपति थे। बिहार के औद्योगीकरण में उनका प्रमुख हाथ रहा। वे जब कॉलेज के शासी-निकाय के प्रथम अध्यक्ष निर्वाचित हुए तब उसके सचिव थे श्रीमान् बाबू मुकुटधारी सिंह, (तत्कालीन अवकाशप्राप्त डिप्टी-मजिस्ट्रेट तथा सुप्रीम-कोर्ट के अवकाश प्राप्त माननीय चीफ जस्टिस श्री भुवनेश्वर प्रसाद सिंह के चाचा)। ये अध्यक्ष और सचिव तन से भले ही दो रहे हों, किन्तु मन एवं कर्म से एक थे, समान विचारधारा वाले तथा निष्पक्ष एवं समर्पित व्यक्तित्व वाले। इन्होंने प्रारम्भ में कॉलेज के विकास की जो रूपरेखा तैयार की वह ऐतिहासिक थी। उन्हीं की आदर्श परम्पराओं को आगे बढ़ाने वाले दूसरे अध्यक्ष हुए प्रसिद्ध उद्योगपति एवं विचारवान् शिक्षाविद् श्रीमान् बाबू चक्रेश्वर कुमार जैन (जिन्होंने बिहार में सर्वप्रथम अल्युमिनियम का कारखाना खोल कर सभी को चमत्कृत कर दिया था) और उनके सहकर्मियों में चौधरी शराफत हुसैन थे, जो शासी-निकाय के दूसरे सचिव बने और जिन्होंने कॉलेज के विकास में सभी प्रकार से सक्रिय सहयोग किया। उनके साथ विश्वविद्यालय के मानद प्रतिनिधियों में डॉ.वी.आर. मिश्रा, (सुप्रसिद्ध अर्थशास्त्री) श्री राधाकृष्ण सिन्हा (बिहार के महान् सपूत श्रीमान् डॉ. सच्चिदानन्द सिन्हा के सुपुत्र) थे। चौधरी शराफत हुसैन के बाद आरा के प्रसिद्ध साहित्यकार श्री देवेन्द्रकिशोर जैन शासी-निकाय के तीसरे सचिव नियुक्त किए गए। इनके अतिरिक्त ख्यातिलब्ध, कर्त्तव्यनिष्ठ, समाजसेवी व्यक्ति ही उसके सदस्य बनते रहे। श्री चक्रेश्वर कुमार जी जैन सर्व सम्मति से दीर्घकाल तक अर्थात् २४ जनवरी १९६२ तक लगातार शासी-निकाय के अध्यक्ष बने रहे। तत्पश्चात् २५ जनवरी १९६२ से ९ अप्रैल १९६२ (अंगीभूत बनाए जाने के दिन तक) शाहाबाद के जिलाधिकारी श्री नन्देश्वर प्रसाद *IAS* उसके अध्यक्ष तथा श्री रामेश्वर प्रसाद अग्रवाल उसके सचिव मनोनीत किए गए।

इस प्रकार कॉलेज की प्रगति का चक्र साधनों के अभाव में भी निरन्तर आगे बढ़ता रहा। मूल बात यह है कि किसी संस्थान के विकास में आर्थिक साधन तो सहायक होते ही हैं किन्तु उसके शासक, प्रशासक, अनुशासक एवं शिक्षक आदि कर्तव्यनिष्ठ हों, निष्पक्ष हों, भविष्यदृष्टा हों, स्वप्नदृष्टा हों, शिक्षा एवं समाज सेवा के प्रति समर्पित व्यक्तित्व वाले हों, जाति एवं सम्प्रदाय की संकीर्णताओं से परे हों, क्षेत्रीयता की भावना से ऊपर उठकर गुणग्राही हों, संस्था को अपनी प्रिय सन्तति समझते हों, तो उन्हीं आदर्शों के बल पर संस्थाएं विकसित होकर ख्यातिलब्ध होती ही हैं और ऐसी संस्थाओं से पढ़-लिखकर निकलने वाले छात्र-छात्राएं समाज एवं राष्ट्र के सच्चे सेवक सिद्ध होते हैं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जैन कॉलेज को निरन्तर ही ऐसे दृढ़ संकल्पी व्यक्तित्व मिलते रहे। प्रो. उदयप्रकाश श्रीवास्तव सा. ने लिखा है—

"These are the persons who have been in so many ways associated with this college either as teachers or students of the college at one time or the other. They carried with them the spirit and the imagination and ideals of service to the society in any capacity they got the apportunity whether in teaching or in administration. Such has been the great traditions which the fathers of the college evolved when they laid its foundation."

कॉलेज के जिन-जिन विभागों के जिन-जिन शिक्षकों ने अपनी कर्त्तव्यनिष्ठा, प्रशासनिक क्षमता एवं योग्यता से बिहार तथा बिहार के बाहर के विश्वविद्यालयों में कुलपति, एवं उपकुलपति के पदों को सुशोभित किया, उनके नाम निम्न प्रकार हैं :—

कुलपति—

१. प्रो. डॉ॰ पी॰ दयाल
(भूगोल विज्ञान) मगध विश्वविद्यालय, बोधगया (बिहार)

२. प्रो. डॉ. अनुजकुमार धान
(इंग्लिश) (१) पूर्वोत्तर विश्वविद्यालय, शिलांग (आसाम) एवं (२) राँची विश्वविद्यालय राँची (बिहार)

३. प्रो. डॉ. न. ला. नड्डा
(वाणिज्य विभाग) राँची विश्वविद्यालय, राँची (बिहार)

४. प्रो. डॉ. रामप्रवेश सिंह
(भूगोल विज्ञान) मगध विश्वविद्यालय, बोधगया (बिहार)

५. प्रो. डॉ. शालिग्राम सिंह
(गणित-विज्ञान) (१) राँची विश्वविद्यालय, राँची (बिहार) (२) ललितनारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा (बिहार) एवं (३) चेयरमैन, बिहार इंटरमीडिएट एजुकेशन कौंसिल, पटना (बिहार)

६. डॉ. कुमार विमल
(हिन्दी) (१) सदस्य तथा तत्पश्चात् चेयरमैन, बिहार पब्लिक सर्विस कमीशन, पटना (२) तत्पश्चात्, वर्तमान में कुलपति, नालन्दा खुला विश्वविद्यालय, पटना

७. प्रो. डॉ. चन्द्रदेव सिंह
(वाणिज्य विज्ञान) ल. ना. मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा (बिहार)

८. प्रो. डॉ. इकबालनारायण सिंह
(रसायनशास्त्र) भागलपुर विश्वविद्यालय, भागलपुर (बिहार)

उपकुलपति

१. प्रो. डॉ. श्यामबिहारी सिंह
(इतिहास) मगध विश्वविद्यालय, बोधगया (बिहार)

२. प्रो. डॉ. सुरेन्द्र प्रसाद सिन्हा
(अर्थशास्त्र) बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर (बिहार)

चिन्तन, लेखन एवं शोध जगत में ह.दा.जैन कॉलेज के जिन शिक्षकों ने मौलिक अवदान देकर शोध जगत में अपनी विशेष पहिचान बनाई, और जैन कॉलेज को भारत विख्यात बनाया, ऐसी हस्तियों की लम्बी सूची यहाँ प्रस्तुत कर पाना सम्भव नहीं। किन्तु कुछ विशिष्ट हस्ताक्षरों के नाम निम्न प्रकार हैं :—

कॉलेज के शिक्षक (जो कॉलेज के छात्र नहीं रहे थे) —

प्रो. नलिन विमोचन शर्मा (हिन्दी साहित्यकार एवं समीक्षक)

प्रो. डॉ. रामशरण शर्मा (सुप्रसिद्ध इतिहासकर)

डॉ. एन. के. देवराज (जो बाद में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणसी में आचार्य एवं विभागाध्यक्ष के रूप में कार्यरत रहे) सुप्रसिद्ध दार्शनिक एवं हिन्दी उपन्यासकार डॉ. शिवनन्दन प्रसाद (जो बाद में विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग, पटना एवं भागलपुर विश्वविद्यालय में कार्यरत रहे)

डॉ. रामचन्द्र प्रसाद (जो बाद में विभागाध्यक्ष अंग्रेजी, पटना विश्वविद्यालय में कार्यरत रहे)

तथा डॉ. विमलेश्वर डे (मनोविज्ञान) डॉ. विश्वनाथ प्रसाद वर्मा (राजनीति शास्त्र विभागाध्यक्ष, पटना वि. वि) डॉ. पी. डी. त्रिपाठी (नाइजीरिया में योरूपीय भाषाओं के प्रोफेसर) डॉ. सीताराम सिंह (विभागाध्यक्ष, इतिहास, बिहार विश्वविद्यालय, डॉ. आर. डी मिश्रा (अध्यक्ष-सांख्यिकी विभाग, भागलपुर विश्वविद्यालय) डॉ. महेन्द्रकुमार जैन वर्तमान में अमेरिका में गणितशास्त्र

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

के प्रोफेसर, डॉ. वी. पी. सिन्हा (प्राच्य भारतीय संस्कृति एवं इतिहास, पटना विश्वविद्यालय) डॉ. सुस्निग्धा डे (स्पेनिश भाषा-विभाग, दिल्ली वि. वि.) डॉ. एच. एन. अग्रवाल (राजनीतिशास्त्र-विभाग, बिहार वि. वि.) डॉ. माधवकान्त, स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद प्रथम पंचवर्षीय योजना आयोग के सदस्य तथा बाद में आचार्य—अर्थशास्त्र विभाग, मेंचेस्टर विश्वविद्यालय, यू. के.) डॉ. मदन गोपाल वसाक, (भौतिकशास्त्र-विभागाध्यक्ष, प्रेसीडेंसी कॉलेज, कलकत्ता) प्रो. डॉ. परमहंसराय, प्रो. जगदीश पाण्डेय, प्रो. रामप्रसादलाल (उर्दू एवं पर्शियन), डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री (संस्कृत एवं प्राकृत) डॉ. वीरकेश्वर प्रसाद सिंह (आचार्य एवं अध्यक्ष, राजनीति विज्ञान मगध विश्वविद्यालय एवं (सदस्य बिहार पब्लिक सर्विस कमीशन, पटना), प्रो. बृजनन्दन रावत (सदस्य, बिहार पब्लिक सर्विस कमीशन, पटना) छात्र एवं शिक्षक (जो जैन कॉलेज के छात्र भी रहे एवं बाद में शिक्षक भी) डॉ. कपिल मुनि तिवारी (वर्तमान में विभागाध्यक्ष अंग्रेजी विभाग, पटना वि. वि.) डॉ. नागेश्वर लाल (वर्तमान में हिन्दी-विभाग, राँची विश्वविद्यालय, राँची) डॉ. सुरेश केशव तथा डॉ. वैद्यनाथ पाण्डेय (अंग्रेजी, वर्तमान में राँची विश्वविद्यालय) आदि।

हमारे कॉलेज के विकास की कथा अधूरी ही रह जायगी, यदि हम अपने उन प्राचार्यों का स्मरण न करें, जिन्होंने कॉलेज को एक सरस्वती-विद्या मन्दिर मानकर अपनी सेवाओं को अर्घ्य के रूप में समर्पित किया। उनकी अपनी एक दीर्घ-परम्परा है। इस श्रृंखला की पहली कड़ी के रूप में कॉलेज के प्रथम प्राचार्य श्री वेणीमाधव अग्रवाल थे, जिन्होंने उन परिस्थितियों में कॉलेज के प्राचार्य का पद-भार ग्रहण किया था, जब कॉलेज केवल एक भावात्मक संज्ञा के रूप में ही वर्तमान था। वस्तुतः वे कॉलेज की नींव के पत्थर थे। उन्होंने साधनों की बिखरी हुई कड़ियों को दिन-रात लगकर संजोया तथा एक सुनिश्चित रूपरेखा प्रदान की। यदि वे कुछ वर्षों तक और जीवित रहते, तो कॉलेज को और भी कुछ नवीन दिशादान करते। किन्तु असमय में ही वे काल-कवलित हो गए। तत्पश्चात् अंग्रेजी-भाषा के प्रोफेसर डॉ. के. सी. गुप्ता ने प्राचार्य का पद भार सम्हाला। उन्होंने भी कॉलेज के विकास की परम्परा को आगे बढ़ाने में परिश्रम किया, किन्तु वे अधिक दिनों तक जीवित न रह सके। उनके बाद डॉ. विमानविहारी मजूमदार ने प्राचार्य का पद भार ग्रहण किया और उन्होंने अपने शिक्षण एवं शोध कार्यों से कॉलेज के वातावरण को निखार दिया। वे कलकत्ता विश्व विद्यालय के अदम्य साहसी, कुशल कुलपति सर आशुतोष मुखर्जी के कार्य-कलापों से प्रभावित होकर जैन कॉलेज आए थे। उन्हीं के सत्प्रयत्नों से कॉलेज के विशाल भवनों का निर्माण हुआ तथा सन् १९४८-४९ में हिन्दी एवं अर्थशास्त्र विषय में तथा १९५०-५१ में राजनीतिशास्त्र में प्रतिष्ठा-वर्ग प्रारम्भ किए। यह उन्हीं के प्रयत्नों का सुफल है कि टी. एन. जे. कॉलेज, भागलपुर के अवकाश-प्राप्त प्राचार्य तथा रसायनशास्त्र के प्रकाण्ड विद्वान् श्री हरलाल दास गुप्त जैन कॉलेज में शिक्षक के रूप में आए और सन् १९४९ में उन्होंने विज्ञान-संकाय की रूपरेखा तैयार की तथा १९५०-५१ में जैन कॉलेज में विज्ञान की विधिवत् कक्षाएं प्रारम्भ कराई। उसी समय ढाका विश्वविद्यालय (वर्तमान बांग्ला देश) के प्रो. एस. जी. मुखर्जी (बायलॉजी डिपार्टमेन्ट के अध्यक्ष के रूप में) तथा पटना विश्वविद्यालय के अवकाश प्राप्त प्रो. कुमारनाथ गुप्त (भौतिकशास्त्र विभाग के अध्यक्ष के रूप में) जैन कॉलेज को अपनी अमूल्य सेवाएँ देते रहे। इस प्रकार विज्ञान-संकाय के विकास के लिए डॉ. मजूमदार के प्रयत्नों को कभी भुलाया नहीं जा सकेगा।

डॉ. मजूमदार ने जब बिहार वि. वि. के कॉलेज-इंस्पेक्टर के रूप में वहाँ का पदभार ग्रहण किया तब उन्होंने अपनी टक्कर के सेवाभावी तथा प्रसिद्ध अर्थशास्त्री डॉ. बी.ब्री. मुखर्जी की प्राचार्य के रूप में कालेज को सेवाएं दिलाई। उन्होंने भी कॉलेज के विकास में पर्याप्त योगदान किया।

डॉ. मुखर्जी के बाद शासी-निकाय ने डॉ. परमहंसराय (तत्कालीन अर्थशास्त्र एवं वाणिज्य विभागाध्यक्ष) को प्राचार्य पद पर प्रतिष्ठित किया। डॉ. राय सादगी एवं सरलता के प्रतीक थे। उन्होंने लन्दन से पी-एच.डी. की उपाधि प्राप्त की थी तथा वहीं से वे केम्ब्रिज एवं आक्सफोर्ड विश्वविद्यालयों के आदर्शों से प्रभावित होकर भारत लौटे और जैन कॉलेज को तदनुसार ही बनाने का प्रयत्न करते रहे। इसके प्रारम्भिक चरण के रूप में उन्होंने कॉलेज की युवाशक्ति को अध्ययनशील एवं कर्मठ बनाने के श्रेष्ठ माध्यम के रूप में वाचनालय को सर्व सुविधा सम्पन्न बनाकर विकसित किया। कॉलेज को-ऑपरेटिव स्टोर्स एवं कॉलेज कैंटीन, विभागीय लगभग २९ परिषदें, लोकप्रिय भाषण-मालाएं, प्रोक्टोरियल बोर्ड, नियमित रूप से कॉलेज मैगजीन एवं निर्देशिका का प्रकाशन, कॉलेज में नए-नए विषयों के अध्ययन की

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्वीकृति-प्राप्ति तथा अध्यापन-व्यवस्था, प्राध्यापकों को शोध-कार्यों के लिए प्रोत्साहन देना आदि उनके जन्मजात स्वाभाविक गुण थे तथा जैन कॉलेज को वे एक आदर्श विश्वविद्यालय का रूप देने का निरन्तर स्वप्न देखते रहे।

उनके बाद कॉलेज के निम्नलिखित विविध विषयों के विभागाध्यक्षों ने समय-समय पर कार्यकारी प्राचार्य के रूप में कार्यकर कॉलेज के विकास में यथासम्भव योगदान किया।

प्रो. डॉ. डी. कुमार (अंग्रेजी) प्रो. जे. सी. दास (अंग्रेजी), प्रो. जे. पाण्डेय (अंग्रेजी) प्रो. डॉ. वीरकेश्वर प्रसाद सिंह, आचार्य एवं अध्यक्ष राजनीति-विज्ञान (मगध वि. वि) प्रो. शमशेर जंग बहादुर (राजनीति विज्ञान) एवं प्रो. दारोगा चौधरी (गणित)। अपने-अपने कार्यकाल में इन्होंने भी कॉलेज के विकास में पर्याप्त प्रयत्न किए।

इनके बाद प्रो. डॉ. कुंजबिहारी सिंह ने कॉलेज के स्थायी प्राचार्य के रूप में अपनी सेवाएं प्रदान की। इनकी विशेषता यह रही कि वे यहां के छात्र भी रह चुके थे और प्राध्यापक भी। बाद में वे ए.एस. कॉलेज, विक्रमगंज के प्राचार्य पद पर प्रतिष्ठित हुए और वहाँ से कॉलेज प्रशासन एवं संचालन का अनुभव लेकर जैन कॉलेज में प्राचार्य पद पर आए। जैन कॉलेज की शानदार परम्पराओं को उन्होंने प्रारम्भ से ही देखा था। उन्होंने यहाँ के शासी-निकाय की समन्वय एवं संचालन क्षमता और निष्पक्ष एवं निर्भीक निर्णय स्वयं देखे थे, साथ ही यहां के उच्चकोटि के शिक्षकों से अध्ययन भी किया था। उस समय के स्वस्थ एवं प्रगतिशील वातावरण से वे प्रभावित थे ही। अतः उन्होंने अपने कार्यकाल में अपने सभी अनुभवों का यथासम्भव पूरा लाभ जैन कॉलेज को दिया।

यह उन्हीं का कार्यकाल था, जब जैन कॉलेज अपने विकास के क्रम में स्नातक से स्नातकोत्तर कॉलेज बन सका।

डॉ. सिंह ने सादा जीवन एवं उच्च विचार के सिद्धान्त को अपने जीवन में अक्षरशः उतारा है। निर्भीकता, निडरता एवं विनम्रता के प्रति सरलता एवं ममता के साथ-साथ अशिष्टों के प्रति उनका शिष्ट-कठोर-व्यवहार भी देखने योग्य रहता था। उन्होंने भोजपुर की भूमि- समस्या पर मौलिक शोधकार्य किया। बिहार तथा अखिल भारतीय स्तर की सहकारिता सम्बन्धी अनेक संस्थाओं के वे प्रभावशाली सदस्य रहे। इसी क्रम में उन्होंने सोवियत-रूस की यात्रा भी की थी।

डॉ. सिंह के अवकाश ग्रहण के बाद डॉ. दिनेन्द्र चन्द्र जैन (आचार्य एवं अध्यक्ष, स्नातकोत्तर वाणिज्य विभाग, ह. दा. जैन कॉलेज) ने प्रभारी प्राचार्य का पदभार ग्रहण किया। वे अनेक संकल्पों को लेकर आए। यद्यपि इनका कार्यकाल संक्षिप्त ही रहा, फिर भी उसमें उन्होंने जैन कॉलेज के विकास के लिए नए ढंग से विचार किया। उनके प्रयत्नों से दीर्घावधि के "बाद कॉलेज फाउण्डेशन डे" का विराट एवं उत्साहवर्धक सफल आयोजन हुआ, जिसमें उन्होंने युवापीढ़ी को सम्बोधित करते हुए उन्हें व्यावसायिक शिक्षा सम्बन्धी नए विभाग खोलने के लिए यू. जी. सी. तथा मगध विश्वविद्यालय की सहायता माँगे जाने की चर्चा की। उनका यह प्रयत्न यदि मूर्तरूप ले पाता तो हमारी युवाशक्ति की बेरोजगारी की समस्या को दूर करने में बहुत कुछ सहायता मिल सकती थी। डॉ. जैन वर्तमान में मगध वि. वि. तथा वीर कुँवर सिह विश्वविद्यालय के वाणिज्य संकाय के डीन के रूप में भी कार्यरत हैं।

डॉ. जैन के बाद डॉ. शिवशंकर सिंह ने प्राचार्य का पद-भार ग्रहण किया। किन्तु उनका कार्यकाल अत्यल्प ही रहा।

उनके बाद डॉ. पारसनाथ सिंह ने प्राचार्य का पदभार ग्रहण किया जो वर्तमान में कार्यरत हैं।

यही है हमारे कॉलेज के अतीत एवं वर्तमान की विकास कथा। स्पष्ट रूप से यह कहा जा सकता है कि पिछले ५० वर्षों में जैन कॉलेज के प्राचार्यों एवं शिक्षकों ने छात्र-छात्राओं, अभि-भावकों एवं आम जनता के सहयोग से अपने प्रक्षेत्र तथा बिहार प्रान्त के उत्थान के लिए पर्याप्त उत्साहवर्धक कार्य किए है।

मौलिक लेखन एवं चिन्तन में जैन कॉलेज के शिक्षकों ने न केवल बिहार, अपितु भारतीय और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की ख्याति प्राप्त की है। हिन्दी समीक्षा के साथ-साथ संस्कृत, प्राकृत, अंग्रेजी, राजनीतिशास्त्र, अर्थशास्त्र एवं वाणिज्य के क्षेत्र के उच्चस्तरीय मौलिक चिन्तन पूर्ण शोध-कार्यों ने जैन कॉलेज को शोध जगत की सुर्खियों में ला खड़ा किया है। जैन कॉलेज के लेखकों के प्रकाशनों की विस्तृत सूची प्रस्तुत करने के लिए यहाँ स्थानाभाव है, फिर भी यह गौरव के साथ कहा जा सकता है कि यदि उन्हें एकत्रित किया जाय तो निश्चय ही एक छोटा-मोटा गौरव-ग्रन्थागार बनाया जा सकता है। १३वीं सदी से १६ सदी के मध्य की अपभ्रंश की अद्यावधि अप्रकाशित जीर्ण-शीर्ण, ऐतिहासिक महत्व की लगभग ३६ पाण्डु-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

लिपियों की खोज, उद्धार, सम्पादन, मूल्यांकन एवं अनुवाद तथा प्रकाशन का विशाल शोधकार्य हमारे जैन-कॉलेज के अन्तर्गत संस्कृत-प्राकृत विभाग के डॉ. राजाराम जैन से ही सम्भव हो सका जिसकी प्रशंसा, जर्मनी, फ्रांस, ब्रिटेन एवं आस्ट्रेलिया में भी मुक्त-कण्ठ से हो रही है तथा वहाँ के शोध छात्र-छात्राएं आरा में वर्तमान में भी आते-जाते बने रहते हैं। यहां के कुछ शिक्षकों ने अखिल भारतीय स्तर के पुरस्कार सम्मान भी अर्जित किए तथा उन्हें आल इण्डिया ओरियण्टल कान्फ्रेंस के अध्यक्ष बनने तथा आल इण्डिया फिलोसोफिकल कान्फ्रेंस के विभागीय अध्यक्ष बनने तथा विद्वद् संगोष्ठियों की अध्यक्षता करने और दर्जनों विश्वविद्यालयों, शोध संस्थानों एवं यू.जी.सी. आदि की विविध समितियों के विशेषज्ञ सदस्य के रूप में मनोनीत होने का सौभाग्य भी प्राप्त होता रहा है।

कॉलेज की यह विकास कथा उसकी अन्तिम कथा नहीं है, यह तो उसकी एक प्रेरक भूमिका मात्र है। हमारे अग्रजों ने अनेक प्रकार के त्याग, कठोर तपस्या एवं साधना के बल पर अपनी भावी पीढ़ी के लिए एक प्रशस्त मार्ग तैयार कर दिया है। वह उससे अवश्य ही प्रेरित होकर अपना दायित्व समझेगी तथा कॉलेज की आदर्श परम्पराओं को समयानुकूल बढ़ाती हुई अपनी अगली पीढ़ी के लिए भी वह एक मार्ग-निर्देशक परम्परा का निर्माण करती रहेगी, ऐसा पूर्ण विश्वास है।

■

शुभ कामनाओं सहित—

वैद्यनाथ की दवाएँ सदा सेवन करें

पटना क्षेत्र के विशिष्ट एजेन्ट

श्री शर्मा आयुर्वेदिक स्टोर्स
न्यू मार्केट, पटना
दूरभाष — २२६७८०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वीर बाबू कुँअरसिंह : एक प्रज्वलित व्यक्तित्व

डॉ. गदाधर सिंह

भारतीय स्वतंत्रता-संग्राम के इतिहास में सन् १८५७ ई. के अमर सेनानी बाबू कुँअर सिंह व्यक्तिवाचक नहीं, भाववाचक संज्ञा के रूप में स्मरणीय हैं। शौर्य, वीरत्व, बलिदान, शत्रु के प्रति भी क्षमाशीलता, गाम्भीर्य, मर्यादावादिता जैसे उदात्त शब्दों का पर्याय ही कुँअर सिंह का व्यक्तित्व है।

सन् १८५७ के अभूतपूर्व विप्लव की प्रकृति के प्रति यह अनावश्यक विवाद उठाया गया है कि इसे स्वाधीनता-संघर्ष कहा जाय या मात्र सिपाही विद्रोह। वास्तविकता तो यह है कि विदेशी सत्ता के विरुद्ध किया जानेवाला हर संघर्ष, चाहे वह किसी भी वर्ग से हो, स्वाधीनता संग्राम होता है। वह राष्ट्र क्लीव होता है जहाँ स्वाधीनता के लिए मर मिटने वाले युवक नहीं, बन्ध्या होती है वह जाति जहां अपने स्वत्व की रक्षा के लिए धधकती चिता में जल जाने वाली स्त्रियाँ नहीं और पशुवत् होता पृवह समाज जो अपना अधिकार दूसरों के हाथों में देकर कुत्ते की तरह चाचक आँखों से उसकी ओर देखा करता है। उसे बेटे के जन्म लेने का लाभ और मरने से क्या हानि, जिसके जीते जी बाप की धरती को शत्रु ने अधिकृत कर लिया हो। इस विद्रोह के द्वारा भारतीय राष्ट्र ने अपनी जीवन्तता का ही परिचय दिया था।

जैसा कि कहा गया है—

पुत्तें जाए कवणु गुणु अवगुणु कवणु मुएण।

जा वप्पी की भुंहडी चंपिज्जइ अवरेण॥ हेम. ३९५/६

इसी प्रकार यह प्रश्न भी उठाया जाता रहा है अपनी आर्थिक विवशता के कारण कुँअर सिंह या अन्य देशी राजे इस विद्रोह में सम्मिलित हुए थे। इतिहास को व्यक्तिवादी दृष्टिकोण से देखने से समाज के भीतर चलनेवाले अन्तर्विरोधों को सही ढंग से नहीं पहचाना जा सकता। क्रान्ति सामाजिक उपज है, व्यक्ति तो उस महायत की एक समिधा मात्र है। जब धरती का हृदय गर्म होता है तब भूकम्प आता है, आकाश का हृदय तप्त होता है तो तूफ़ान आता है और जब समाज का हृदय जलता है तब क्रान्ति आती है। सन् १८५७ ई. के विप्लव और कुँअर सिंह की भूमिका को इसी संदर्भ में समझना चाहिए।

ईस्ट इंडिया कम्पनी के अनवरत शोषण, उत्पीड़न और साम्राज्यवादी निरंकुशता के विरुद्ध देश भर में विप्लव की जो भीषण अग्नि शिखा उठी उसकी लपटे बिहार प्रदेश को भी छूने लगी और इसका केन्द्रबिन्दु हुआ जगदीशपुर, जो एक प्रतिष्ठित राज्य और बादशाह शाहजहाँ के समय से ही इस रियासत के अधिपति को "राजा" की उपाधि प्राप्त थी उस समय वहाँ के राजा थे प्रातः स्मरणीय बाबू कुँअर सिंह।

कुँअर सिंह के हृदय में अंग्रेजी-साम्राज्य के प्रति प्रारम्भ से विद्वेष का भाव था और १८५७ के विलपव के बहुत पूर्व ही सन् १८४५-४६ ई. के "पटना-षडयन्त्र" में इनकी भी सक्रिय भूमिका थी जैसा कि शाहाबाद के मजिस्ट्रेट जैक्सन ने लिखा था। "बाबू कुँअर सिंह आरा और शाहाबाद के अल्प नगरों में अत्यधिक लोकप्रिय है। पटना के षडयन्त्रकारियों के साथ उनकी साठ-गाँठ होने का सन्देह है।" इससे प्रमाणित होता है कि इस विप्लव में कुँअर सिंह का सम्मिलित होना कोई आकस्मिक घटना नहीं थी बल्कि बहुत पहले से ही उनके मस्तिष्क में इसकी भूमि तैयार हो गयी थी और जब दानापुर के विद्रोही सैनिकों ने इनसे नेतृत्व की प्रार्थना की तब उन्होंने इसे सहर्ष स्वीकार कर लिया। वे मानते थे कि एक क्षण के लिए प्रज्वलित होकर समाप्त हो जाना श्रेयस्कर है किन्तु चिरकाल के लिए धुँधुआना ठीक नहीं—मुहूर्तं ज्वलितं श्रेयं न च धूमं चिरायितं।

तथा—

किसको है कब मयस्सर यह काम कर गुजरना
इक बाँकपन से जीना, एक बाँकपन से मरना।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जो जान को न जाने जो मौत को न माने
जीना उसीका जीना मरना उसी का मरना ॥

सन् १८५७ के विद्रोही नेताओं में कुँअरसिंह ही ऐसे सेनानायक थे, जिनके पल्ले में पराजय के क्षण एकाध बार ही आये अन्यथा उन्हें सर्वत्र विजय-श्री प्राप्त हुई। इनकी विजयिनी सेना का प्रथम शंखनाद आरा के मोहासरे से हुआ।

आम के बाग का युद्ध—

आरा हाउस में कैद अंग्रेजों को मुक्त करने के लिए दानापुर से एक अंग्रेजी सेना कप्तान डनवर के नेतृत्व में चली, जिसे कायमनगर के पास कुँअर सिंह की सेना से मोरचा लेना पड़ा। इस युद्ध में कुल ४१५ अंग्रेज सैनिकों में से मात्र ५० जीवित बचकर भागने में सफल हो सके, शेष वहीं मारे गये। अंग्रेज सेनापति कप्तान डनवर भी मारा गया।

बीबीगंज का संग्राम—

अंग्रेजों के सौभाग्य से मेजर आयर नदी मार्ग से इलाहाबाद जा रहा था। उसके पास एक सुसज्जित सेना थी। आरा का समाजार सुन वह आरा लौटा और बीबीगंज के पास आठ दिनों के भयंकर संग्राम के बाद जगदीशपुर पर नियन्त्रण करने में सफल हो सका। जगदीशपुर के नवीनतम विशाल शिवमन्दिर को ध्वस्त कर उसने अपनी पाशविकता का परिचय दिया।

युद्ध कौशल की दृष्टि से पीछे हटकर कुँअर सिंह ने कैमूर की पहाड़ियों का आश्रय लिया और अमरसिंह को छापामार युद्ध संचालित करने का उत्तरदायित्व देकर स्वयं तात्याटोपे और नानासाहब से मिलकर संग्राम को गतिशील करने के लिए रींवा, बाँदा, कालपी होते हुए अवध की ओर बढ़ गए।

अवध के नवाब ने इनका पूर्ण सत्कार किया और आदारसूचक पोशाक और एक फरमान दिया। इन्होंने नानासाहब से भी भेंट की और कानपुर के युद्ध में उन्होंने नानासाहब की मदद की।

मिलमैन की पराजय—

१८ मार्च १९५८ ई. को कुँअर सिंह आजमगढ़ से २५ मील दूर उत्तरौलिया में डेरा जमाये थे कि कर्नल मिलमैन ने उनपर आक्रमण किया। कुँअर सिंह तेजी से पीछे हटने लगे। मिलमैन ने यह सझकर कि कुँअर सिंह भाग गया, अपने सैनिकों को भोजन करने की आज्ञा दे दी। इसी समय कुँअर सिंह ने बाज की गति से झपट कर मिलमैन की सेना को धर दबोचा। किसी तरह भागकर मिलमैन ने अपनी जान पचाई। सारी तोपें और असबाब कुँअरसिंह के हाथ लगे और आगे बढ़कर आजमगढ़ पर उन्होंने अधिकार कर लिया।

कर्नल डेम्स की पराजय—

कुँअर सिंह से आजमगढ़ छीन लेने के लिए कर्नल डेम्स आगे बढ़ा किन्तु इसे भी भयंकर पराजय का मुख देखना पड़ा। उसने जीतने की योजना बनायी।

कैनिंग की घबड़ाहट—

अपनी सेना की एक टुकड़ी को आजमगढ़ में छोड़ कुँअरसिंह बनारस की ओर बढ़े। मिलमैन तथा डेम्स की पराजय तथा कुँअर सिंह की सफलताओं से लार्ड कैनिंग घबरा उठा और उसने प्रधान सेनापति कैम्पबेल से सलाह कर लार्ड मार्क को कुँअर सिंह से लड़ने के लिए भेजा।

लार्ड मार्क की पराजय—

६ मार्च १८५८ को लार्ड मार्क के साथ कुँअर सिंह का मुकाबला हुआ। लिखा गया है कि ८१ वर्ष का वह राजपूत योद्धा अपने सफेद घोड़े पर सवार होकर तलवार हाथ में ले बिजली की तरह सेना के बीच इधर से उधर लपकता दिखाई पड़ रहा था। लार्ड मार्क बुरी तरह पराजित हुआ और मैदान छोड़कर भाग निकला।

लुगार्ड की पराजय—

न जाने क्यों बनारस की ओर न जाकर कुँअर सिंह ने अपनी पैतृक रियासत जगदीशपुर की ओर जाने का मन बना लिया। वे गाजीपुर की ओर बढ़े। १५ अप्रैल को ७०० सैनिकों तथा १४ तोपों के बल पर लुगार्ड ने कुँअर सिंह का मार्ग अवरोधक बनने का साहस किया किन्तु परिणाम वही हुआ जो होना चाहिए। लुगार्ड बुरी तरह पराजित हुआ और प्राण रक्षा के लिए मैदान छोड़कर भाग खड़ा हुआ। उसकी सारी तोपें कुँअर सिंह के हाथ लगीं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

डगलस की पराजय—

कुँअर सिंह को शिकस्त देने का उत्तरदायित्व डगलस को सौपा गया। किन्तु १७ अपैल को जुघाई के मैदान में कुँअरसिंह ने उस पर आक्रमण किया कि डगलस को भागने के अतिरिक्त दूसरा कोई मार्ग शेष नहीं था।

गोली से घायल होना—

कुँअर सिंह की अदम्य इच्छा अपनी मातृभूमि को शत्रुओं से मुक्त करने की थी। फलतः बलिया से १० मील पूरब शिवुपुर घाट से उन्होंने गंगा पार करने का निश्चय किया। इस काम में स्थानीय जनता ने उनकी पूरी मदद की। कुँअर सिंह की समस्त सेना गंगा पार कर चुकी थी, मात्र एक किश्ती शेष थी जिसमें स्वयं कुँअर सिंह थे। दुनिया के युद्ध के इतिहास में यह घटना विरल है कि सेनाध्यक्ष को अपने से अधिक अपनी सेना की सुरक्षा की चिन्ता हो। नेपोलियन के अतिरिक्त ऐसा उदाहरण अन्यत्र नहीं मिलता। दुर्भाग्यवश कुँअरसिंह की किश्ती गंगा में आधी हो गयी थी कि तोप का एक गोला उनकी दाहिनी कलाई में आकर लगा। यह अनुमान कर कि इसका विष शरीर के अन्य भागों को प्रभावित कर सकता है ८१ वर्ष के इस वृद्ध राजपूत ने स्वयं अपनी तलवार से अपनी दाहिनी भुजा काटकर नैवेद्य के रूप में मां गंगा को अर्पित कर दिया।

जगदीशपुर पर अधिकार—

२२ अप्रैल सन् १८५८ को एक विजयी सेनापति के रूप में बाबू कुँअरसिंह ने अपनी मातभूमि की रज अपने माथे से लगा उसे सैनिक सलामी दी।

लीग्रैण्ड की पराजय—

अभी जगदीशपुर में प्रवेश किए २४ घंटे भी व्यतीत नहीं हुए थे कि कैप्टन लीग्रैण्ड के नेतृत्व में एक सुसज्जित अंग्रेजी सेना ने जगदीशपुर पर आक्रमण किया। अंग्रेजों के पास दूरमारक एनफील्ड नामक बन्दूकें थी और तोपें भी, जबकि कुँअर सिंह के पास कोई तोप नहीं थी। जगदीशपुर से २ मील की दूरी पर दुलउर नामक ग्राम में दोनों सेनाओं की टक्कर हुई। घायल अवस्था में भी कुँअर सिंह ने जिस वीरता और कौशल से युद्ध का संचालन किया, वह इतिहास में अभूतपूर्व है। इस युद्ध में अंग्रेजों को भारी पराजय का मुँह देखना पड़ा। उसके ३०० अधिकारियों में मात्र २५-३० ही अपनी जान बचाकर आरा पहुँच सके। स्वयं लीग्रैण्ड को गोली लगी और वह मर गया। अंग्रेजों की सारी तोपें कुँअर सिंह के हाथ लगी।

जीवन-दीप बुझ गया—

२३ अप्रैल की यह विजय कुँअर सिंह के जीवन की अन्तिम विजय थी किन्तु उनके हाथ का घाव अच्छा नहीं हुआ था और इस घाव के कारण ही २६ अप्रैल सन् १८५८ ई. को स्वतन्त्रता संग्राम के इस अमर सेनानी ने अपनी इहलीला समाप्त कर अमरत्व प्राप्त किया। प्रसिद्ध इतिहासकार श्री सुन्दरलाल के शब्दों में—

"कुँअर सिंह की मृत्यु के समय स्वाधीनता का हरा झंडा उसकी राजधानी के ऊपर फहरा रहा था और अंग्रेज कम्पनी के आधिपत्य से वह अपनी रियासत और प्रजा दोनों को सर्वथा स्वतंत्र कर चुका था।"

इतिहासकार होम्स ने लिखा है—

"इस बूढ़े राजपूत की, जो ब्रिटिश सत्ता के विरुद्ध इतनी वीरता और शान के साथ लड़ा, २६ अप्रैल सन् १८५८ को मृत्यु हुई।"

बाबू कुँअरसिंह इतिहास सृष्टा पुरूष थे। भारतवर्ष के इतिहास को उन्होंने अपने रक्त से लिखा था। वे भोजुपुर के सर्वमान्य बादशाह थे। वे न जुल्म करते थे और न जुल्म सहते थे। जैसा कि किसी ने कहा भी है—

लुटा के अपनी खुशियाँ जिसने बटोरे आंसू
वो बादशाह था गो उस पै ताजो-तख्त न था॥
उन्हीं फकीरों ने इतिहास बनाया है यहाँ
जिनको इतिहास को लिखने तक का वक्त न था।
जो जुल्म सह के भी चुप रह गया, न खौल उठा
वो कुछ और हो मगर, आदमी का रक्त न था (नीरज)

बाबू कुँअर सिंह के व्यक्तित्व को रवीन्द्रनाथ ठाकुर के शब्दों में कहना चाहें तो कह सकते हैं—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नाइ नाइ भय, हबे हबे जय खुले जाबे एइ द्वार
जानि जानि तोर बन्धन डोर छिड़े जाबे बारबार ॥

बारे बारे तोरे फिरे पेते हबे विश्वेर अधिकार।
चिर दिन तुइ गाइबे जे गान
फूल पल्लव नदी निर्झर सुरे सुरे तोर मिलाइबे स्वर
छन्दे जे तोर स्पन्दित हबे आलोक अन्धकार ॥

अर्थात् भय नहीं है, भय नहीं है, विजय निश्चित है, यह द्वार खुलकर ही रहेगा। मै ठीक जानता हूँ—तेरे बन्धन की डोर बार-बार टूट जायेगी। अरे भाई। तुझे बार-बार विश्व का अधिकार पाना होगा। तू जो गान गायेगा, तेरे उस प्रत्येक स्वर मे फूल, पल्लव, नदी, निर्झर, सर, सरिताएं सुर मिलायेंगी और तेरे प्रत्येक स्वर के आलोक स्वन्दित होंगे।

स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग, (मगध वि. वि. केन्द्र)
ह. दा. जैन कॉलेज, आरा (बिहार)

सरल व्यक्ति ही परमात्मा के पथ का अधिकारी होता है

For latest designs & best qualities of Gold and Silver Ornaments & Stones --
Kindly Remember

Basant Lall & Sons, Jewellers

Chowk, ARRAH

Phone : 21385

सत्य समय से भी अधिक मूल्यवान है

अलका ड्रेसेज

धरमन चौक, आरा

रेडीमेड ऊनी एवं सूती फैन्सी कपड़ों के प्रमुख विक्रेता।
अवश्य पधारें।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Role of Sri Adinath Trust In Educational Development and Social Welfare

Prof. (Dr.) Raja Ram Jain
Ex-university Prof. (Prakrit) &
Head of the P .G. Deptt. of Sanskrit-Prakrit
H.D. Jain College, Arrah (Bihar)

The span of life covered by Sri Hara Prasad Jain (1848-1920) was a period of transition and revolutionary changes in India. As a lad of about ten years he must have seen in 1857 how Arrah was a battle-field between Babu Kunwar Singh and the British Army. After attaining maturity he saw around him the wave of renaissance led by the great men of that time. As a result of this a tradition was built up all over India by the industrialists and businessmen to spend a part of their profits over educational development and charitable works like widow homes, Dharmshalas for the pilgrims and helping the disabled, deaf, dumb and the blind etc. That was the need of the hour apart from what the nationalist politicians were doing for attaining political freedom.

Sri Har Prasad Das Jain, an eminent zamindar and a businessman of Arrah was one of them. Only a couple of years before his death, he made a gift of all his movable and immovable property in 1918 and established a Trust for its management by the name of Bhagwan Sri Adinatha Trust since then has been rendering valuable services in the field of educational development and social service. A brief account of these activities is being given below:—

1.Sri Adinath Trust:—

The Trust Committee is the nucleus of the origin of all the activities as mentioned in the Trust deed. Its main sources of income are zamindari annuity received by the Government, rent from shops & buildings, interest on Bank deposits. This Trust is registered with Digambar Jain Board of the Government. In accordance with the rules, the committee prepares the annual budget and spends over various activities. The Committee in addition to the Trust property spends about Rs. 30,000/- annually over philanthropic works like aid to the poor and helpless widows, marriages of girls of poor families, medical aid to the sick, aid to poor students, free boarding and lodging to poor pilgrims and journey fare and provision of facilities for those who stay in the Dharmshala & other religious functions.

2.H.D. Jain College, Arrah—

As mentioned elsewhere in this souvenir, this College was established by Sri Adinath Trust on the 21st January 1942 on the auspicous day of Sri Vasant Panchmi. "The Trust doneted a sum of Rs. 1,55,000/- to this College. The Col-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

lege soon became one of the premier Colleges of Bihar where we are having Post graduate teaching in all subjects presently. The College has produced brilliant Scholars and administrators during the last fifty years of its life.

3.H.P.D. Jain School. Arrah –

Established in 1920, it is one of the best managed Schools in this State. It is a well known School for its brilliant results and matters of discipline. It is regarded as an ideal institution.

4.Har Prasad Das Jain Children's Institute –

In 1972 Sri Adinatha Trust established a Children's institute in the Campus of H.P.D. Jain School to meet the needs of primary education where education is emparted to students of IV & V standard.

5.Sri Adinath Dumb, Deaf and Blind School –

This School imparts education and training in handicrafts to the dumb and the deaf boys so that they can stand on their legs and develop self confidence.

6.Har Prasad Jain Hostel, Patna –

This hostel gives boarding and lodging facilities to the students going for higher education. The hostel is situated in Makhaniakuan and was established in 1925 by Sri Adinatha Trust. It accomodates about twenty five students.

7.Har Prasad Das Jain Dharmasèla –

Sri Har Prasad Jain in his life time had established this Dharmasala in 1904. It has a big building of its own. This is now managed by Sri Adinatha Trust. It provides lodging facilities to all who come to stay here. This Dharmasala is also used for marriages and other functions. About 10000 persons stay here every year.

8.Har Prasad Jain Charitable Dispensary –

This clinic is accomodated in one of the outer rooms of Har Prasad Jain Dharmshala and there is provision for free treatment of patients membering about ten thousand every year.

9.Bhagawan Sri Adinatha Temple –

Sri Adinatha Trust has also errected an artistic Jain temple in which a marble idol of Sri Adinatha the first Tirthanker of Jain religion has been installed. In its vicinity Sammeda Shikhar of marble along with the glimpses of Girnar and Kailash mountains and Girnar hills. Champapuri and Pawapuri have been beautifully carved. There is also a spacious Hall by the side of this temple for religious discourses and meetings.

■

दया रहित जीवन धिक्कार योग्य है–

With Best Compliments form

K. K. Textiles

Stockists :

Santogen Suitings & Shirtings,

Shree Sunder Market, Arrah – 8 02301

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आरा नगर : पुराणेतिहास के दायरे में

डॉ. (श्रीमती) विद्यावती जैन

बिहार-प्रान्त (प्राच्यकालीन मगध, विदेह एवं अंग-चम्पा आदि) पुराकाल से ही वैदिक, जैन एवं बौद्ध संस्कृतियों का ऐसा त्रिवेणी-संगम रहा है, जहाँ से समग्र भारत तथा एशिया के देशों में विविध सांस्कृतिक परम्पराओं का प्रवाह होता रहा है. यही कारण है कि इतिहासकारों ने उसे एशियाई संस्कृति का "प्रकाश-स्तम्भ" कहा है. उनके कथनानुसार, भारतीय संस्कृति एवं इतिहास को तब तक प्रामाणिक रूप में प्रस्तुत नहीं किया जा सकता, जबतक बिहार-प्रदेश का सर्वांगीण गम्भीर अध्ययन नहीं हो जाता. बिहार-प्रदेश के अनेक सांस्कृतिक केन्द्रों में "आरा" का नाम भी अपना विशेष स्थान रखता है. इतिहास-यात्री यदि आरा जिले की पक्रिमा करें, तो यहाँ एक ओर उन्हें रामायण एवं महाभारत कालीन अनेक प्रसंगों के स्मृति चिन्ह उपलब्ध होंगे, तो दूसरी ओर बौद्ध-बिहारों एवं जैन-केन्द्रों के अगणित अवशेष भी सहज ही प्राप्त हो सकेंगे. प्राचीन साहित्य एवं कुछ पुरातात्विक सन्दर्भों के आधार पर उक्त आरा-नगर एवं उसके आसपास के प्राचीन स्थलों की ऐतिहासिकता का संक्षिप्त परिचय यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।

प्राचीन संस्कृत-साहित्य में :—

आरा-नगर पूर्व रेलवे के हावड़ा-मुगलसराय-रेलमार्ग पर पटना से ५० किलो मीटर दूर पश्चिम में स्थित है. आरा से चार मील पश्चिम "मसाढ़" नामक ग्राम के जैन मन्दिर में एक प्राचीन तीर्थंकर मूर्ति मिली है, जिसके अभिलेख में आरा को "आरामनगर" कहा गया है तथा उसकी अवस्थिति "करुष" देश में मानी गई है.

बाल्मीकिरामायण के अनुसार, करुष देश पूर्वीय भारतीय जनपदों में प्रधान एवं समृद्ध माना गया है. महाभारत के अनुसार उसकी स्थापना वैवस्वत मनु के छठे पुत्र करुष ने की थी. बाल्मीकिरामायण के अनुसार, करुष देश का एक सरोवर इतना पवित्र था कि वृत्रासुर की हत्या करने के बाद इन्द्र ने उसमें स्नान कर अपने को पवित्र किया था और इसी कारण उसने इस देश को निरन्तर हरा-भरा रहने का वरदान दिया था. उक्त जैनमूर्ति-अभिलेख में उल्लिखित उक्त आरामनगर ही सम्भवतः आगे चलकर "आरा" के रूप में विकसित और प्रसिद्ध हो गया.

कुछ विद्वानों की धारणा है कि वर्तमान आरा का प्राचीन नाम "एकचक्रापुरी" था. महाभारत में आदिपर्व के अनुसार, पंच-पाण्डव जब षडयन्त्र-पूर्ण मायावी लाक्षागृह से निकल भागे थे, तब वे एकचक्रापुरी-निवासी किसी ब्राह्मण के यहाँ आकर रुके थे. एकचक्रापुरी के समीपवर्ती वन में ही बकासुर नाम का एक राक्षस रहता था. वह नियमानुसार प्रतिदिन "एकचक्रापुरी" के एक व्यक्ति को खा जाता था. उसी क्रम में जब उक्त ब्राह्मण की बारी आई, तब उस परिवार के लोग बिलख-बिलखकर रोने लगे. पाण्डवों की माता कुन्ती ने उनके रोने का कारण जानकर उन्हें आश्वस्त किया और भीमसेन के द्वारा उस राक्षस को मरवा डाला. वर्तमान किंवदन्तियों के अनुसार, बकासुर का निवास-स्थान वर्तमान आरा-नगर के पश्चिम में "बकरी" (पकड़ी) ग्राम में था. "एकचक्रापुरी" एवं "बकरी" ग्राम के लोगों ने जब बकासुर के वध का समाचार सुना, तब एकचक्रापुरी का नाम आरा अर्थात् "नवजीवन-प्रापक दिवस" आरा अस्ति यस्याः नगर्याः नवजीवन-प्रापको दिवसः आरा नगरी (शब्दकल्पद्रुम १/१८७) घोषित किया था. इस घटना के पश्चात् ही पाँचों पाण्डव पांचाल-देश को वापस लौटे थे.

कुछ विचारकों के अनुसार, संस्कृत में "चक्र" पहिये को कहते हैं और "आरा" पहिये में लगे हुए "डण्डे" को, जिस प्रकार एक पहिये (चक्र) में कई आरे लगे होते हैं, उसी प्रकार "एकचक्रापुरी" में भी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अनेक मुहल्ले रहे होंगे, जो आरा के नाम से भी प्रसिद्ध रहे होंगे. आगे चलकर ये मुहल्ले कम-कम होते गये और जब केवल एक ही मुहल्ला बचा, तब वह "एकचक्रापुरी" के पर्यायवाची "आरा" के नाम से प्रसिद्ध हो गया. तात्पर्य यह कि वर्तमान आरा-नगर महाभारतकालीन "एकचक्रापुरी" के केवल एक मुहल्ले के रूप में अवशिष्ट है.

कतिपय अनुसन्धित्सुओं की यह भी मान्यता है कि राजा मयूरध्वज ने लौहनिर्मित आरा (चीरने का औजार) से अपने पुत्र को इसी स्थल पर चीरा था. इस कारण, इस स्थल का नाम "आरा" पड़ गया. किन्तु, यह मान्यता उचित प्रतीत नहीं होती, क्योंकि राजा मयूरध्वज की राजधानी छपरा में सिद्ध होती है. पुरातत्ववेत्ताओं के अनुसार, छपरा के "रतनपुरा" नामक मुहल्ले में अभी तक उसके चिन्ह वर्तमान हैं और जिस स्थल पर उसने अपने पुत्र का बलिदान किया था, उसका नाम अब भी "चिरान्द-छपरा" के नाम से प्रसिद्ध है।

जैसा कि पूर्व में कहा जा चुका है, आरा-नगर में वर्तमान "पकड़ी" (बकरी) नाम के मुहल्ले में बकासुर का वध किया गया था। उस मुहल्ले में अभी भी एक ऐसा ऊँचा टीला उपलब्ध है, जिसे लोग "बकासुर का गढ़ कहते हैं। टीले पर बने मिट्टी के ढूह को "बकासुर का चौरा (पिण्डी) कहकर कुछ जातियों के लोग आज भी उस पर सुअर की बलि तथा मदिरा आदि वस्तुएँ चढ़ाते हैं और वहाँ की मिट्टी को पवित्र मानकर उससे अपना घर बनाते हैं। वहाँ की खुदाई में प्राचीनकालीन बड़ी-बड़ी ईंटें, गहनें एवं अन्य सामग्री भी मिलती है। उस स्थल के आसपास के निवासी आज भी दन्तकथा के रूप में बकासुर के वध की घटना का स्मरण किया करते हैं।

संस्कृत एवं प्राकृत-साहित्य में आरा शब्द-अरण्य, जंगल, उपवन एवं वन के अर्थ में प्रयुक्त होता है। बिहार-प्रान्त इस प्रकार के अनेक आरामों से भरा पड़ा है। आरा के समीपवर्ती अधिकांश ग्रामों एवं नगरों के नाम भी आराम एवं वन जैसे विशेषणों से जुड़े हुए हैं। जैसे : चँदवा-चन्द्रवन, बनाही-बनाभीत, (भयभीत कर देने वाला वन, जंगल, अरण्य) कोइलवर-कोकिलावन, सहार-सहस्रार अथवा सहस्राम्रवन, एकवना-एकाम्रवन, सासाराम-सहस्राराम आदि। इन आराम एवं वन के विशेषणों से संयुक्त ग्रामों एवं नगरों को देखकर रामायणकालीन इन्द्र द्वारा करुष देश के सरोवर में स्नानोपरान्त पवित्र होने के कारण दिये गये वरदान वाली पूर्वोक्त बात स्पष्ट हो जाती है। बिहार के प्राचीनकालीन सारंगारण्य (सारण) चम्पकारण्य (चम्पारण) जैसे-अरण्य-बहुल प्रदेशों में अरण्य अथवा आराम नगर भी हरा-भरा प्रदेश रहा होगा, इसमें कोई सन्देह नहीं, जो आगे चलकर संक्षिप्त रूप में "आरा" के नाम से प्रसिद्ध हुआ। आरण्यदेवी यहाँ की अधिष्ठात्री संरक्षिका देवी मानी जाती थी, जिसके चमत्कार बहुल कथानक आज भी जनमानस को पवित्र करते रहते हैं। वह "आरण्यदेवी" ही वर्तमान में "आरनदेवी" के नाम से प्रसिद्ध है। कुछ विचारकों की मान्यता है कि इसी आरण्यदेवी के नाम पर इस नगर का नाम भी आरा पड़ गया।

पालि-प्राकृत-साहित्य में :—

बौद्ध-साहित्य में उपलब्ध "आलवी" नगर से भी कुछ विद्वान् "आरा" की पहचान करते हैं। उनके अनुसार, भगवान् बुद्ध को "आलवी" नगर अत्यन्त प्रिय था। बौद्ध-साहित्य में आलवी के ब्राह्मणग्राम की भी चर्चा आती है। यह ब्राह्मणग्राम आज कल "बभनगावाँ" के नाम से प्रसिद्ध है। इस ग्राम की जनसंख्या में अधिक प्रतिशत ब्राह्मणों का ही है। बहुत सम्भव है कि वहाँ के ब्राह्मण बौद्ध-विरोधी रहे हों, उसी कारण बौद्धों ने उन्हें "यक्ष" की संज्ञा प्रदान की थी। पालि अथवा मागधी-प्राकृत में "र" के स्थान में "ल" हो जाता है। अतः कुछ विद्वानों की धारणा है कि उक्त "आरवी" नगर ही आगे चलकर आरवी-आरव-आरा के नाम से प्रसिद्ध हो गया।

सुप्रसिद्ध योरोपीय विद्वान् "होये" के अनुसार, भगवान् बुद्ध के गुरु "आरद" का निवास स्थल होने से ही उनके नाम पर इस स्थान का नाम "आरा" पड़ा।

भौगोलिक एवं भूगर्भशास्त्रीय प्रमाणों के आधार पर :

भौगोलिक एवं भूगर्भशास्त्रीय प्रमाणों के आधार पर आरा-नगर प्राचीन काल में गंगा नदी के तट पर बसा था, किन्तु कालक्रम से गंगा नदी का प्रवाह स्थानान्तरित होते-होते क्रमशः उत्तर की ओर लगभग १२ किलोमीटर दूर हट गया। वर्तमान में वह स्थान "गाँगी" के नाम से प्रसिद्ध है। पुरातत्ववेत्ताओं का अनुमान है कि आरा-नगर एवं गंगा-प्रवाह की यह दूरी लगभग ४००० वर्ष पहले हुई होगी।

पुराणों एवं अनुश्रुतियों के आधार पर :

शिवपुराण में लिखा है कि गंगा के तीर पर "सिद्धेश्वर" नाम का एक उपज्योतिर्लिंग स्थापित है। यह पूर्व में कहा ही जा चुका है कि गंगानदी आरा-नगर का स्पर्श करती हुई चलती थी।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

असम्भव नहीं कि "बिनटोली" के निकट स्थित सिद्धेश्वर महादेव ही वह उपज्योतिर्लिंग हो ?

अनेक अनुश्रुतियों के अनुसार, आरा-नगर में एक विशाल गढ़ था, जो राजा मयूरध्वज का बनवाया हुआ था। कुछ लोगों के अनुमान के आधार पर, उसकी सीमा वर्तमान गोपाली चौक, टाउन-थाना, बॉसगोला और नई कचहरी से गाँगई तक फैली हुई थी और उसका प्रमुख दरवाजा, "नमकहट्टी" में पड़ता था। "नमकहट्टी" में ही एक देवी की मूर्ति थी, जो द्वार की "अधिष्ठात्री देवी के नाम से प्रसिद्ध थी। वर्तमान में वही देवी "आरनदेवी" के नाम से प्रसिद्ध है। आरनदेवी के मन्दिर की मूलवेदी के पास ही एक सुरंग थी, जिससे नीचे ही नीचे कई महत्वपूर्ण स्थानों में जाया जा सकता था, किन्तु सम्प्रति, किन्हीं विशेष कारणों से इसे बन्द कर दिया गया है। कचहरी के निर्माणार्थ उसकी नींव खोदते समय भी गढ़-सम्बन्धी कुछ अवशेष उपलब्ध हुए थे, किन्तु नई कचहरी बन जाने से अब न तो पुरानी कचहरी ही रही और न गढ़ के अवशेषों का ही पता है। उनकी ओर कोई विशेष ध्यान भी नहीं दिया गया। अब तो स्थिति यह है कि उसी स्थल पर नए-नए भवनों के बनते जाने तथा उत्खनन के अभाव में पुरातात्विक सामग्री के मिलने की सम्भावना ही नहीं रही।

कुछ समय पूर्व गाँगी के किनारे एक सुन्दर उद्यान उपलब्ध हुआ था, जिसमें एक छोटी कृत्रिम झील, वृष्टिकारक यन्त्र, मन्दिर, भवन और विविध प्रकार की वनस्पतियाँ मिली थीं। यह स्थल "सदासावन" के नाम प्रसिद्ध था। उसमें जो भवन बना हुआ था, उसके विचित्र रोशनदान तथा आसपास की घुमावदार नालियाँ और उनकी कारीगरी आदि आश्चर्यचकित कर देनेवाली थीं। उस भवन के निर्माण में केवल ईट एवं चूने का ही प्रयोग किया गया था। लकड़ी का नहीं, वर्तमान में यद्यपि वह अत्यन्त जीर्ण-शीर्ण हो चुका है, तथापि उसकी छत एवं दीवालें इतनी सुदृढ़ हैं कि उसकी ईंटें निकालना घोर परिश्रम का कार्य है। कुछ लोगों का विश्वास है कि यह भवन प्राचीनकाल का एक समृद्ध कोषागार था, जिसमें किसी राजा की धन-सामग्री छिपी पड़ी थी। इस किंवदन्ती को ध्यान में रखकर आरा के एक अंगरेज प्रशासक जान लिविस चेरियट ने भवन के कुछ अंश को तुड़वाया था, किन्तु उसमें सोना-चाँदी तो नहीं, प्राचीन कुछ अवशेषों के साथ-साथ महादेव की एक सुन्दर मूर्ति अवश्य मिली थी, जो इस समय "सिद्ध महादेव" अथवा "कमलेश्वर" के नाम से प्रसिद्ध है।

कहा जाता है, महर्षि विश्वामित्र यहीं पर पीपल के वृक्ष के नीचे यज्ञ किया करते थे। प्राचीन काल में यह विद्या-साधना का महान् केन्द्र माना जाता था। उस स्थल की खुदाई में जो नाली मिली, उसका सम्बन्ध "बिनटोली" स्थित कुएँ के साथ था, जिससे सिंचाई एवं झरनों के लिए पानी निकाला जाता था। कहा जाता है कि उक्त अँगरेज-प्रशासक को उक्त महादेव की मूर्ति के साथ-साथ एक ताम्रपत्र भी मिला था, जिसमें लिखा था :" बाबू कुँवर धीरशाह (सूबेदार, बिहार) के द्वारा स्थापित मूर्ति। अब यह अन्वेषण का विषय है कि कुँवर धीरशाह कहाँ के और कौन थे ? कुछ लोगों का अनुमान है कि वे पश्चिमी भारत के निवासी क्षत्रिय वीर पुरुष थे और उन्होंने बिहार (पटना) में अपना गढ़ बनवाया था, जो बाद में ढह गया। बराँव में भी उन्होंने अपना एक गढ़ बनवाया था। उदवन्तनगर के वर्तमान राजपूत सम्भवतः उनके रिश्तेदारों के ही वंशज हैं।

आरा-नगर में महाजन टोली नं.। सर्वोन्नत मानी गई है। वहाँ स्थित पातालेश्वर महादेव के विषय में मान्यता है कि "भगवान् शिव" के अनन्य भक्त बाणासुर ने भक्ति विह्वल होकर उनकी लिंग-मूर्ति का निर्माण कराया था। इस मूर्ति की उपलब्धि उस समय हुई, जब आरा के एक प्रतिष्ठित नागरिक श्रीलखपतदास जैन उसी स्थल पर अपना आवासीय भवन बनवाने हेतु नींव खुदवा रहे थे। किन्तु, जब वहाँ इस मूर्ति की उपलब्धि हुई, तब उन्होनें वहाँ अपना भवन न बनवाकर एक मन्दिर बनवा दिया और वहीं उक्त महादेव की विधिपूर्वक स्थापना-प्रतिष्ठा करा दी।

आरा-नगर में एक सुप्रसिद्ध मुहल्ला है- "महादेवा।" धर्मन-चौक को बड़ी मठिया से मिलानेवाले मार्ग में उक्त मुहल्ला पड़ता है। इसके आखिरी छोर पर स्थित महादेव का मन्दिर "योगेश्वरनाथ" के नाम से प्रसिद्ध है। इस मूर्ति की उपलब्धि सन् १७६० ई. के आसपास एक भवन के निर्माण के समय हुई थी। कहते हैं कि जगदीशपुर के उज्जैनिया राजपूत बाबू साहब प्रसाद सिंह ने अपनी कोठी के निर्माण के लिए वहाँ ढूह पर जब नींव कुदवाई, तब उसी में उक्त शिवलिंग मिला था। अतः उन्होंने वहाँ अपना भवन न बनवाकर मन्दिर बनवा दिया। इस शिवलिंग को भी कुछ पौराणिक विद्वान् द्वापरयुगीन बाणासुर द्वारा प्रतिष्ठापित मानते हैं।

वर्तमान काल में आरा का जो पवित्र स्थल "बड़ी मठिया" के नाम से प्रसिद्ध है, वह महावीरजी का मन्दिर है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कहते हैं कि अख्तियारपुर (आरा) के श्रीहनुमान सहाय गोरखपुर के जंगलों में से भगवानदास नाम के एक समाधिस्थ साधु को उठाकर आरा ले आये थे। जब उनकी समाधि टूटी, तब अपने को स्थानान्तरित देखकर वे बहुत रुष्ट हुए और पुनः गोरखपुर के जंगलों में वापस जाने के लिए हठ करने लगे। किन्तु, लोगों के बार-बार अनुनय-विनय करने पर उन्होंने यहाँ रहना स्वीकार कर लिया। आगे चलकर उनके एक शिष्य बालकृष्णदास ने उक्त बड़ी मठिया का निर्माण कराकर महावीर जी की स्थापना कराई। बाबा भगवानदास का लँगोट और तुम्बी पुण्यश्लोक बाबू शिवनन्दन सहाय के वंशजों के यहाँ अब भी सुरक्षित हैं।

इसी प्रकार, आरा नगर के मझौआ, टीला, भलुहीपुर का पंचपीरवा अथवा पंचवीर (जिसका सम्बन्ध पंच-पाण्डवों से भी सम्भव है) काजीटोले के समीप में स्थित दूधकटोरा, १९ वीं शती के प्रारम्भ में निर्मित अँगरेज़ों का पोखरा (डींस टेंक) सन् १६२३ ई. के आसपास शाहजहाँ द्वारा बनवाई गई बड़ी मस्जिद, चित्रटोली में स्थित खाकशाह की कब्र, आरा हाउस, कर्मनटोला, धर्मन चौक, मनसा पाण्डे बाग, मौलाबाग आदि आरा-नगर के महत्वपूर्ण इतिहासका युग-युग से उद्घोष करते आ रहे हैं।

आरा-नगर के आसपास की, जिसकी सीमा भोजपुर जिले के रूप में बँधी हुई है, ऐतिहासिक सम्पदा भी कम महत्वपूर्ण नहीं। आरा के पश्चिम में लगभग ७ किलोमीटर दूर जो "मसाढ़" नाम का ग्राम है, वह तीर्थकर महावीर एवं बुद्धकालीन "महाशाल बन" है। चीनी यात्री ह्वेनसांग जब आविद्धकर्ण (वर्तमान बलिया) से गंगा पार कर पाटलिपुत्र जा रहा था, तब वह महाशाल वन में आकर रुका था और वहाँ उसने अनेक जैन एवं बौद्ध साधुओं के दर्शन किये थे। इससे विदित होता है कि वर्तमान "मसाढ़" प्राचीन काल में एक विशाल जैन एवं बौद्ध केन्द्र रहा था। वहाँ के आसपास के इलाकों में आज भी प्राचीन जैन मूर्तियाँ बहुतायत-से मिलती है।

बक्सर व्याघ्रसर, वेदगर्भा आदि के नाम से जाना जाता है। लोगों का ऐसा विश्वास है कि भगवान् रामचन्द्र शिक्षा ग्रहण करने तथा विश्वामित्र के आश्रम की रक्षा-हेतु यहाँ पधारे थे। कुछ पुरातत्ववेत्ताओं ने यद्यपि इसे एक भ्रान्त-कल्पना कहा है, तथापि उनका कथन वस्तुतः प्राचीन साहित्य के गम्भीर चिन्तन के अभाव का ही फल है। इसके आसपास जगदीश्वर के वामनेश्वर महादेव, राज़ा बलि की राजधानी "बलिगाँव", ताड़गाँव (ताड़का का निवास स्थल) "वामनावतार" से सम्बन्ध रखनेवाला "बहियारा गाँव" "सोनबरिसा" एवं "धवरी के टीले" आदि महान् ऐतिहासिक स्थल हैं।

प्राकृत भाषा का बहियारा शब्द संस्कृत के बहिर्द्वार का रूपान्तर है। प्रतीत होता है कि आरा नगर से बाहर आने जाने का वह बहियारा अर्थात् बहिर्द्वार रहा होगा।

आरा के पूर्व में स्थित वर्तमान मनेर ग्राम ही प्राचीनकालीन मणिगढ़ है, जहाँ पाणिनि-व्याकरण के महान् वार्तिककार कात्यायन का जन्म हुआ था। मनेर का कात्यायनी मन्दिर आज भी प्रसिद्ध है। कहते हैं कि महर्षि च्यवन का आश्रम भी कोइलवर और मनेर के बीच किसी स्थल पर स्थित था।

शाहाबाद : आरा का प्राचीन नाम :—

हिजरी-संवत् १०४३ (सन् १६२३ ई.) में शाहजहाँ अपने पिता से लड़कर जब भागा था, तब उसे आरा में ही प्रश्रय मिला था। वह जिस स्थल पर रुका था, उसकी सीमा सरकारी विवरणों में "शाहाबाद" के नाम से उल्लिखित है। अतः शाहजहाँ के आगमन से आरा नगर का अपर नाम शाहाबाद पड़ गया, जो आगे चलकर शाहाबाद जिले के रूप में प्रसिद्ध हो गया।

आरा जिले का वर्तमान नाम भोजपुर है। धारापुरी के राजा भोज ने "चेरों" नामक राजा को जीतकर भोजपुर की स्थापना की थी। आगे चलकर उज्जैन के क्षत्रियवंशी राजा रुद्रप्रतापनारायण ने उसी भोजपुर के पास एक नया भोजपुर बसाया और वहाँ नवरत्न नाम का महल बनवाया था। काल के प्रभाव से अब वह जीर्ण-शीर्ण हो चुका है।

आरा-नगर के निर्माण में एक ओर ज़हाँ हिन्दुओं एवं मुसलमानों का महत्वपूर्ण योगदान है, वहीं जैनों की साहित्यरसिकता, कलाप्रियता, विद्याप्रेम, दानशीलता एवं उदारता भी अविस्मरणीय है। उनके द्वारा निर्मित ४७ कलापूर्ण जैनमन्दिर, देवकुमार जैन ओरियण्टल रिसर्च इन्स्टीच्यूट, जैन सिद्धान्त भवन, एवं विशाल जैन ग्रन्थागार, जैनबाला-विश्राम, विविध जैन विद्यालय एवं महाविद्यालय आदि हैं, जो पिछली लगभग एक शती से आरा जिले के प्राचीन गौरव के विकास में निरन्तर सक्रिय हैं।

संक्षेप में, यह कहा जा सकता है कि हमारा आरा नगर वैदिक, जैन एवं बौद्ध संस्कृति के समन्वयात्मक रूप का पर्याय है,

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जो युग-युगान्त से भारत के सांस्कृतिक विकास एवं इतिहासनिर्माण में अपना मौन सक्रिय योगदान करता आया है। भले ही उसने काल के थपेड़ों से वर्तमान में उसे अपना चोला बदल देना पड़ा हो। तथापि उसके आन्तरिक वातावरण में आज भी इतिहास का मधुर संगीत, प्राच्य संस्कृति का सौरभ, स्वर्णिम अतीत के प्रति निष्ठा एवं विश्वास का आत्मगौरव तथा चतुर्दिक् आत्म-सम्मान की प्रबल कामना उसमें व्याप्त है।

सहायक-सामग्री

श्रमण संस्कृति में वर्णित बिहार (डॉ. राजाराम जैन) गया. १९७५ ई.

बाल्मीकिरामायण

महाभारत (आदिपर्व)

शब्दकल्पद्रुम

जैन सिद्धान्तभास्कर एवं जैन एण्टीक्वैरी

आरा : सिटी आफ टेम्पुल्स (आरा, १९६४ ई.)

आरा पुरातत्व

ग्रेट मैन आफ शाहाबाद

हिन्दी-विभाग
म.म.महिला कॉलेज
(वीर कुँवर सिंह विश्वविद्यालय)
आरा (बिहार), ८०२३०१

■

सभी आत्माएँ समान हैं
कोई भी छोटा या बड़ा नहीं।

With best compliments from

NEOGI & COMPANY

EAST RAMANA ROAD, ARRAH

Proprietor – Sri Mewa Prasad

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आरा नगर के चार प्राचीन गौरव ग्रन्थागार

भोजपुर जनपद में सांस्कृतिक एवं राष्ट्रीय वातावरण बनाने तथा उच्च शिक्षा एवं शोध के प्रचार-प्रसार में आरा नगर के चार ग्रन्थागार विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। उनका संक्षिप्त परिचय यहाँ प्रस्तुत है:— सम्पा.

१. नागरीप्रचारिणी सभा :

आरा-नागरी प्रचारिणी सभा की स्थापना सन् १९०१ ई. में जिन महानुभावों के सहयोग से की गई थी, उनमें प्रमुख हैं, महामहोपाध्याय पं. सकलनारायण शर्मा, बाबू जयबहादुर अग्रवाल, बाबू अमीरचन्द्र अग्रवाल, बाबू रामकृष्णदास, बाबू जैनेन्द्र-किशोर जैन एवं बाबू देवकुमार जैन। सन् १९२८ ई. तक सभा किराये के मकान में रही। इसी वर्ष सरकार से भू-अर्जन के बाद वर्तमान भवन की नींव पड़ी। बाबू अमीरचन्द्र ने भवन-निर्माण के लिए ५ हजार रुपये दान में दिये। फलस्वरूप १२ हजार रुपये की लागत से दो कमरे बनाये गये। सन् १९१५ ई. में राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्रप्रसाद को अभिनन्दन-ग्रन्थ समर्पित किये जाने के अवसर पर बिहार के तत्कालीन अर्थमन्त्री स्व. अनुग्रह-नारायण सिंह तथा शिक्षामन्त्री स्व. आचार्य बदरीनाथ वर्मा के प्रयास से भवन निर्माण के लिए बिहार-सरकार से पचीस हजार रुपये नकद और भविष्य में अधिकाधिक अनुदान के लिए आश्वासन मिले। वर्तमान भवन उसी राशि से निर्मित हुआ। बाबू रामकृष्णदास ने भी बाजार में एक दो मंजिला पक्का मकान सभा के लिए प्रदान किया। इस प्रकार, भवन-निर्माण के कार्य में कुछ प्रगति आई।

सभा ने हिन्दी-साहित्य का भण्डार समृद्ध करने के उद्देश्य से प्रकाशन-कार्य भी प्रारम्भ किया। अभी तक इस योजना के अन्तर्गत निम्नांकित ग्रन्थों का प्रकाशन हो चुका है :

१. नवरस, २. मेगास्थनीज का भारत-विवरण, ३. गल्पकुसुमावली, ४. हिन्दी- सिद्धान्तप्रकाश, ५. रसायनशास्त्र, ६. अर्थशास्त्र, ७. तर्कशास्त्र, ८. भारतवर्ष के इतिहास की समालोचना, ९. खगोलविज्ञान (सचित्र) १०. पण्डित बलदेवप्रसाद की जीवनी, ११. पेडलर साहब की जीवनी, १२. बा. रामदीन सिंह जी की जीवनी, १३. बा. राधाकृष्णदास की जीवनी, १४. श्रीतारकेश्वरयशोगान, १५. सिद्धनाथकुसुमांजलि, १६ अपराजिता (उपन्यास), १७. आरा-पुरातत्व, १८ कलवार की उत्पत्ति (समालोचना), १९. राजेन्द्रमालती (उपन्यास), २०. अद्भुत प्रायश्चित्त (उपन्यास), २१. विचित्र संग्रह (काव्य), २२. सृष्टितत्व, २३. सिक्ख गुरुओं का इतिहास और २४. मैथिलकोकिल विद्यापति।

इसके अतिरिक्त सभा ने पं. अयोध्यासिंह उपाध्याय हरिऔध अभिनन्दन ग्रन्थ एवं राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्रप्रसाद अभिनन्दन ग्रन्थों के प्रकाशन किए। अर्थाभाव के कारण दो अन्य अभिनन्दन-ग्रन्थों का प्रकाशन न हो सका, यद्यपि उनके लिए लेख इत्यादि का संग्रह किया जा चुका था। वे थे राजा राधिकारमण प्रसाद सिंह अभिनन्दन ग्रन्थ तथा पं. रामदहिन मिश्र-अभिनन्दन ग्रन्थ।

सभा के अध्यक्ष-पद पर बहुत दिनों तक हिन्दी के प्रसिद्ध उपन्यासकार राजा राधिका-रमणप्रसाद सिंह थे। उनके प्रयास से सभा का प्रकाशन-कार्य सुचारु रूप से संचालित था। उनके निधन के बाद अध्यक्ष पद पर हिन्दी सेवी तथा हिन्दी-व्याकरण के लेखक पं. रामप्रीत शर्मा "प्रियतम" निर्वाचित हुए थे। इसके पूर्व वे सभा के प्रधान मंत्री थे। वे अपने मन्त्रित्व-काल में सभा के भवन-निर्माण की दिशा में निरन्तर सक्रिय रहे। उनमें लगन थी। वे सभा की उन्नति के सम्बन्ध में अहर्निश चिन्तित रहा करते थे। उनके निधन के बाद अध्यक्ष-पद पर हिन्दी के उपन्यासकार डॉ. बनारसी प्रसाद भोजपुरी निर्वाचित किये गये। उनके कार्यकाल में डॉ. राजाराम जैन के सम्पादकत्व में सन् १९८७ से शोध पत्रिका का प्रकाशन प्रारम्भ हुआ जिसकी मुक्तकण्ठ से सर्वत्र प्रशंसा हो रही है। डॉ. भोजपुरी जी के दुखद निधन के बाद

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वर्तमान में डॉ. मुरलीमनोहर प्रसाद उसके अध्यक्ष पद पर आसीन हैं।

सभा की उन्नति के लिए सतत प्रयास करने वालों में सर्वश्री स्व. राजाराधिकारमण प्रसाद सिंह, स्व. निर्मलकुमार जैन, स्व. शौकीन सिंह एडवोकेट, स्व. सिद्धनाथ सिंह, स्व. शंकर सिंह, स्व. शिवपूजन सहाय, स्व. डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री, स्व. सूरजप्रसाद सिंह, स्व. रामेश्वरप्रसाद अग्रवाल, स्व. रामरेखाप्रसाद इत्यादि के नाम लिए जा सकते हैं। वर्तमान सदस्यों में सर्वश्री ब्रजकिशोर बहादुर, नरेन्द्रबहादुर, डॉ. मुरलीमनोहरप्रसाद, प्रो. रामेश्वरनाथ तिवारी, डॉ. राजाराम जैन, डॉ. रामनाथ पाठक प्रणयी (अब स्वर्गीय), प्रदीपचन्द जैन, डॉ. कपिल देव पाण्डेय, (अब स्वर्गीय) नरेन्द्रभूपबहादुर, सच्चिदानन्द सहाय, आदि का सक्रिय सहयोग सभा को निरन्तर मिल रहा है।

सभा ने समय-समय पर स्वयं तो विभिन्न गोष्ठियों के आयोजन किये ही, साथ ही दूसरी संस्थाओं द्वारा आयोजित विभिन्न गोष्ठियों तथा सम्मेलनों की सफलता के लिए यथोचित सक्रिय सहयोग भी प्रदान किये हैं। सभा की ओर से साहित्य-साधकों तथा लब्धप्रतिष्ठ देशभक्तों के निधन पर भी शोक-सभाओं के आयोजन किये गये हैं और दिवंगत आत्माओं के प्रति श्रद्धांजलियाँ अर्पित की गई हैं।

सभा का यद्यपि अपना भवन है, तथापि अभी बहुत सीमा तक उसे अपूर्ण ही कहा जायेगा। उसके समक्ष अर्थाभाव की विकट समस्या खड़ी है। इसलिए, आर्थिक कठिनाईयों को सुलझाने में वह परेशान है। अनेक आवश्यक कार्य पड़े हुए हैं। हाल ही में बिजली की रोशनी और कुछ पंखों का प्रबन्ध किया गया है। सत्तर फीटवाले मंच को भरकर सीमेण्ट से गच कराया गया तथा पुस्तकालय के लिए भवन के पूरबवाले हिस्से पर दोमंजिला भवन का निर्माण किया गया है, जिसमें ग्रन्थों की सुरक्षा, सुव्यवस्था एवं ग्रन्थसेवा-प्रसार का कार्य सुचारु रूप से चल रहा है। पाठकों की संख्यावृद्धि ही सभा की लोकप्रियता का उत्तम प्रमाण है। यह प्रयास भी किया जा रहा है कि नगर-भवन (टाउन हॉल) के रूप में इस भवन को बनाया जाय। इसके लिए करीब सवा लाख रुपये की आवश्यकता है। भवन की आवश्यकता को महसूस करते हुए जिलाधिकारी महोदय ने सरकार से अनुदान देने के लिए सिफारिश की है। यदि अनुदान मिल गया, तो उसका कार्य तो पूरा किया ही जा सकेगा, अन्य नवीन प्रकाशनों की दिशा में भी सभा अग्रसर हो सकेगी। हमारी आगामी योजनाएं इस प्रकार हैं : १. शोध-संस्थान के रूप में ग्रन्थागार का संचालन एवं शोधार्थियों को मार्गदर्शन; २. हिन्दी और भोजपुरी की नवीन शोध-साहित्य कृतियों का प्रणयन कराकर उनका प्रकाशन और राज्य के लेखकों को पुरस्कृत करना; ३. दिवंगत साहित्यिकों के स्मरणार्थ उनके नाम पर पदक या अन्य पुरस्कारों की योजना; ४. स्वस्थ एवं सुरुचिपूर्ण अभिनयों का प्रदर्शन; ५. भोजपुर जिले में यत्र-तत्र पड़ी हुई जीर्ण-शीर्ण हस्तलिखित पोथियों का संग्रह तथा उनका सम्पादन-प्रकाशन; ६. पुरातत्व-कक्ष की व्यवस्था एवं ७. विविध भाषणमालाओं का आयोजन।

उक्त सन्दर्भों में हम सभी हिन्दी-प्रेमियों का ध्यान आरा-नागरी-प्रचारिणी सभा के आर्थिक सहयोग के लिए अनुरोध करना चाहते हैं। साथ ही, जनतान्त्रिक सरकार से भी अनुरोध करना चाहते हैं कि वह इसकी गरिमा को ध्यान में रखते हुए पर्याप्त अनुदान देने की कृपा करें, जिससे कि उसका सारस्वत संकल्प पूरा हो सके।

— रणजीतबहादुर सिंह (एम. एल. सी.)

(२) आरा की सेण्ट्रल जैन ओरियण्टल लायब्रेरी, जैन सिद्धान्त भवन एवं देवकुमार जैन ओरियण्टल रिसर्च इंस्टीच्यूट (मगध विश्वविद्यालय द्वारा मान्यता प्राप्त)

प्राच्य भारतीय विद्या के शोधक्षेत्र में सन् १९०३ में संस्थापित उक्त लायब्रेरी एवं रिसर्च इंस्टीच्यूट का अपना विशेष महत्व है। देशी एवं विदेशी प्राच्यविदों ने इस ग्रन्थागार में संकलित एवं सुरक्षित अमूल्य सामग्री का भरपूर उपयोग किया है। ऐसे सुधी विद्वानों में डॉ. हरमन याकोबी, प्रो. ग्लाजनिप, प्रो. आल्सडोर्फ, स्टैला क्रामरिश, गुस्टाव रॉथ, डॉ. ए.एन. उपाध्ये, डॉ. हीरालाल जैन, डॉ. सु. कु. चटर्जी प्रभृति विद्वान् प्रमुख हैं। महामना पं. मदनमोहन मालवीय, महात्मा गान्धी, विनोवा भावे, डॉ. राधाकृष्णन्, डॉ. राजेन्द्र प्रसाद प्रभृति महामनीषियों एवं विचारकों ने इसका अवलोकन एवं इसके कार्यों की प्रशंसा की है।

उक्त ग्रन्थागार में लगभग १०,००० प्राचीन ताड़पत्रीय एवं कर्गलीय हस्तलिखित ग्रन्थ एवं लगभग ३०००० मुद्रित उच्चस्तरीय ग्रन्थ एवं शोध पत्र-पत्रिकाएं सुरक्षित हैं। सन् १९०३ ई. से इस संस्था की ओर से हिन्दी एवं अंग्रेजी में सम्मिलित शोध-पत्रिका "जैन सिद्धान्त भास्कर एवं जैन एण्टीक्वेरी" का प्रकाशन भी होता आ रहा है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इसकी अमूल्य सामग्री के सदुपयोग को दृष्टि में रखते हुए मगध विश्वविद्यालय ने इसे एक शोध-संस्थान के रूप में मान्यता प्रदान की है।

उक्त संस्थान के अन्तर्गत विविध प्रकार के शोधकार्य हुए हैं और लगभग ५० विद्वानों को विविध शोधोपाधियां प्राप्त हो चुकी हैं। वर्तमान काल में इसमें १३ शोधस्नातक पी-एच.डी. एवं डी. लिट् उपाधि हेतु कार्यरत हैं। वर्तमान में इसके निदेशक प्रो. (डॉ.) राजाराम जैन हैं।

(३) ह. दा. जैन कॉलेज ग्रन्थागार—

जैन कॉलेज का ग्रन्थागार विविध विषयक ग्रन्थों के संग्रह का विशिष्ट कोटिका संग्रहालय है उसमें कॉलेज में पढ़ाए जाने वाले सभी विषयों के सामान्य एवं शोधोपयोगी ग्रन्थ सुरक्षित हैं।

सुविधा की दृष्टि से ग्रन्थागार को कुछ विभागों में विभक्त किया गया है। यथा—

—निर्धन छात्र विभाग,

—बुकबैंक विभाग

—सामान्य विभाग

—सन्दर्भ विभाग

—विभागीय ग्रन्थागार

वर्तमान में उक्त ग्रन्थागार में लगभग तीन लाख से अधिक ग्रन्थ एवं शोध एवं सामान्य पत्र-पत्रिकाएं सुरक्षित हैं।

—डॉ. चन्द्रदेव राय
अध्यक्ष-संस्कृत प्राकृत विभाग,
ह.दा. जैन कॉलेज, आरा।

(४) बाल हिन्दी-पुस्तकालय :

यद्यपि इस पुस्तकालय की स्थापना कुछ छात्रों ने मिलकर की थी; लेकिन देखते ही देखते यह युवा बन गया और राजनीति का प्रसिद्ध केन्द्र भी। स्वतन्त्रता-आन्दोलन के सिलसिले में अनगिनत सभाओं का मंच बना हुआ था। इसीलिए ब्रिटिश सरकार की इस पर कड़ी निगाह रहती थी और इसकी सारी चीजें जब्त कर ली गई थी। यह बन्द भी कर दिया गया था। जब इसे मुक्ति मिली, तबतक इसकी पुस्तकें प्रायः नष्ट हो चुकी थी। उस समय इसके सभी बाल-संस्थापक भी युवा बन गये थे। वे भी आन्दोलन में शरीक थे ;जैसे रामायण बाबू, विन्ध्याचल बाबू इत्यादि।

अब पुस्तकालय फिर खुल गया है। संस्थापक रामायण बाबू सक्रिय रूप से भाग लेने लगे। पुस्तकालय में फिर जान आ गई। पदाधिकारियों में कुछ रद्दोबदल हुआ। स्व. डॉ. गांगुली स्व. रघुवंशनारायण सिंह, स्व. डॉ. रघुवरदयाल और श्री भागवत प्रसाद अग्रवाल काफी दिलचस्पी लेने लगे। अर्थ की व्यवस्था भागवत बाबू के जिम्मे थी। उन्होंने अपना अमूल्य समय देकर पुस्तकालय के भवन में रद्दोबदल किया और दुकानें बनवाई। इससे संचालन-व्यय का साधन सुलभ हो गया।

स्व. व्रजनन्दन सहाय की पुस्तकें पुस्तकालय को दान में उनके परिवारवालों से प्राप्त हुई। पुस्तकालय समृद्ध हुआ। कुछ समय पूर्व श्री हरप्रसाद दास जैन के ग्रन्थों को भी इस पुस्तकालय को समर्पित किया गया है। इसी प्रकार, अन्य लोगों के द्वारा भी इसे अनेक पुस्तकें प्राप्त हुई हैं। पुस्तकालय नियमित रूप से चलने लगा है। पर कुछ दिनों से भागवत बाबू अस्वस्थता के कारण पूरा समय न दे सके, इसलिए, पुस्तकालय बन्द जैसा रहने लगा। किन्तु कुछ लोगों के प्रयास से हाल ही में नये पदाधिकारियों का चुनाव किया गया है। आशा है, नये पदाधिकारी पुस्तकालय को नया रूप देगें।

—डॉ. बनारसीप्रसाद भोजपुरी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आरा नगर के दो विस्मृत साहित्यकार

(१) महाकवि वृन्दावनः

महाकवि वृन्दावन (वि.सं. १८४८-१९०६) बारा ग्राम (भोजपुर) के निवासी थे। वे इस सदी के उन राष्ट्रवादी तेजस्वी महाकवियों में थे, जिन्हें विशिष्ट परिस्थितियों में काशीवास करना पड़ा था। पारिवारिक भरण-पोषण हेतु, उन्हें वहां अंग्रेजों की एक टकसाल में सेवाकार्य करना पड़ा। सेवाकार्य किया अवश्य, किन्तु भोजपुरी-भूमि के महिमा-मण्डित गौरव को ध्यान में रखकर ही। अंग्रेज अफसर से झड़पों के फलस्वरूप उन्हें कारागार में भी बन्द रहना पड़ा था, किन्तु अपनी भक्ति के चमत्कार के प्रभाव से उन्होंने दुष्ट अँग्रेजों को भी अपना अनुयायी बना लिया था। इस महान् दार्शनिक कवि ने सदा स्वाभिमानी का जीवन व्यतीत किया और तत्कालीन भोजपुरी-प्रभावित हिन्दी में दर्जनों दार्शनिक कृतियों का सृजन कर माँ भारती के चरणों में श्रद्धा के सुमन अर्पित किये हैं। कवि ने अपनी एक रचना में स्वयं लिखा है :

बानारसी-आरा ताके बीच बसै बारा।
सुरसरि के किनारा तहाँ जनम हमारा है ॥
ठारे अड़ताल माघ सेत चउदै सोम-पुष्य।
कन्या लग्ने भानु अंश सत्ताइस धारा है ॥

इनकी प्रमुख रचनाओं के नाम निम्नप्रकार हैं :—

(१) प्रवचनसार (हिन्दी पद्यानुवाद) (२) तीस चौबीसी पाठ, (३) चौबीसी पाठ (४) छन्द शतक (५) अर्हत्पाशाकेवली एवं (६) वृन्दावन विलास। इनके अतिरिक्त हिन्दी एवं संस्कृत में इनके द्वारा लिखित एवं प्रेषित चार आध्यात्मिक पत्र प्रसिद्ध हैं।

वृन्दावन दास बाद में आरा में आकर बस गए थे। वहाँ महाजन टोली नं. २ आरा में उनका भवन अभी भी बना हुआ है किन्तु अब वह खण्डहर बन चुका है।

भोजपुरी-भाषा के उद्भव एवं विकास, भाषावैज्ञानिक अध्ययन, भोजपुरी की लोक-संस्कृति, भोजपुर निवासियों की जीवन-पद्धति एवं दार्शनिक पृष्ठभूमि तथा साहित्यिक इतिहास के लेखन की दृष्टि से महाकवि वृन्दावन का साहित्य अत्यन्त महत्वपूर्ण है। उनकी रचनाओं का महत्व इसी से आँका जा सकता है कि वे (रचनाएं) महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश, गुजरात, दक्षिण भारत, पंजाब, राजस्थान एवं पश्चिमी बंगाल में समान रूप से लोकप्रिय हैं और हिन्दी का, अधिकांशतः अहिन्दी-प्रदेशों में प्रचार कर रही हैं।

—डॉ. राजाराम जैन

(२) स्व. ब्रजनन्दन सहाय "ब्रजवल्लभ" (सन् १८९७-१९४९ ई.)

ब्रजनन्दन सहाय "ब्रजवल्लभ" शाहाबाद के भारतेन्दु थे। उन्होंने हिन्दी के निर्माण एवं विकास काल में न केवल विविध विधाओं में श्रेष्ठ कृतियों का प्रणयन किया, अपितु साहित्यिक प्रतिभाओं की खोज कर उन्हें प्रेरित और प्रोत्साहित भी किया। सर्वतोमुखी प्रतिभा के धनी, साहित्यमूर्ति श्रद्धेय ब्रजवल्लभ जी ने उपन्यास, नाटक, जीवनचरित, प्रहसन एवं निबन्ध तो लिखे ही, बंगला के कुछ प्रसिद्ध ग्रन्थों के अनुवाद के साथ-साथ अर्थशास्त्र, राजनीति-विज्ञान, पत्रकारिता आदि पर भी अपनी लेखनी चलाई। ब्रजनन्दन सहायजी की अधिकांश रचनाएं "बाल हिन्दी-पुस्तकालय" के "शिवनन्दन-ग्रन्थागार" में उपलब्ध हैं, जिनकी कालक्रमानुसार सूची इस प्रकार है :

१. राजेन्द्रमालतीउपन्यास१८९७ खड्गविलास प्रेस, बाँकीपुर
२. हनुमानलहरीकाव्य१८९८ लक्ष्मीवेंकटेश्वर छापाखाना, मुम्बई
३. श्रीब्रजविनोदकाव्य१८९९ खड्गविलास प्रेस, बाँकीपुर
४. अद्भुत प्रायश्चित्तउपन्यास१९०५ खड्गविलास प्रेस, बाँकीपुर
५. सप्तम प्रतिमानाटक१९०६ भारतजीवन यन्त्रालय, काशी
६. अर्थशास्त्र १९०६ आरा-नागरी-प्रचारिणी सभा, आरा

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

७. चन्द्रशेखर (बंकिमचन्द्र) अनुवाद १९०७ खड्गविलास प्रेस, बाँकीपुर

८. पं. बलदेव प्रसाद की जीवनी १९०७ आरा-नागरी-प्रचारिणी सभा, आरा

९. रायबहादुर बंकिमचन्द्र की जीवनी १९०७ आरा-नागरी-प्राचारिणी सभा, आरा

१०. बाबू राधाकृष्णदास की जीवनी १९०७ आरा-नागरी-प्रचारिणी सभा, आरा

११. मैथिलकोकिल विद्यापति-पदावलीकाव्य-सम्पादन १९०८ आरा-नागरी-प्रचारिणी सभा, आरा

१२. विद्यापति ठाकुर की जीवनी १९०८ आरा-नागरी-प्रचारिणी सभा, आरा

१३. सत्यभामा-मंगलकाव्य १९०८ खड्गविलास प्रेस, बाँकीपुर

१४. कमलाकान्त का इजहार (प्रहसन) अनुवाद १९०८ हिन्दी ट्रान्सलेटिंग कम्पनी, कलकत्ता

१५. बूढ़ा वर (गद्य-पद्य मिश्रित) प्रहसन १९०९ खड्गविलास प्रेस, बाँकीपुर

१६. उद्धव नाटक १९०९ खड्गविलास प्रेस, बाँकीपुर

१७. सौन्दर्योपासक उपन्यास १९११ खड्गविलास प्रेस, बाँकीपुर

१८. राधाकान्त उपन्यास १९१२ हरिदास एण्ड कम्पनी, कलकत्ता

१९. निबन्ध-संग्रह १९१५ खड्गविलास प्रेस, ब्राँकीपुर

२०. आरण्यबाला उपन्यास १९१५ बहार ऑफिस, काशी

२१. लाल चीन उपन्यास १९१६ काशी-नागरी-प्रचारिणी सभा

२२. रजनी (बंकिमचन्द्र : उपन्यास) अनुवाद १९१७ हरिदास एण्ड कम्पनी, कलकत्ता

२३. शिक्षा विलास बालोपयोगी १९३३ शिव-साहित्य-सदन, बाबूबाजार

२४. उषाङ्गिनी नाटक १९२५ खड्गविलास प्रेस, बाँकीपुर

२५. विस्मृत सम्राट उपन्यास १९३६ खड्गविलास प्रेस, बाँकीपुर

२६. विश्व-दर्शन गद्य-काव्य १९४० पुस्तक-भण्डार, लहेरियासराय

२७. वरदान नाटक १९४१ खड्गविलास प्रेस, बाँकीपुर

२८. कलंक-मार्जन नाटक १९४९ यूनियन प्रेस, पटना

१. प्रस्तुत ग्रन्थसूची सहायजी के पुत्र श्रीसुरेशजी द्वारा उपलब्ध हुई है।

आरा नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित शोध पत्रिका अंक १ से साभार

मन की प्रसन्नता औषधि का कार्य करती है—

With best Compliments from

NIPUN RADIOS & ELECTRICALS

Jail Road, Arrah

Authorised Dealer — Bush TV Radio, Onida, Beltek, Texla TVS.

(After Sale-Service is our Speciality)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आरा नगर के विकास में स्थानीय जैन समाज की भूमिका

प्रो. (डॉ.) राजाराम जैन

बिहार के आधुनिक विकास के इतिहास में यदि आरा नगर के जैनों के कार्य-कलापों की चर्चा न की जाय, तो वह अधूरा ही रहेगा। आरा नगर वैसे तो रामायण-कालीन नगर है। उस समय उसका नाम क्या रहा होगा, यह एक शोध का विषय है, किन्तु मसाढ़ (प्राचीन महाशालवन, जि. भोजपुर) के प्राचीन जैनमन्दिर में सुरक्षित एक जैनमूर्ति के लेखानुसार उसका प्राचीन नाम आरामनगर (उपवनों एवं बगीचों का नगर) था यह लेख अनुमानतः ७वीं शती का है। चीनी यात्री ह्वेनसांग अविद्ध कर्ण से पाटलिपुत्र जाते समय महाशालवन (मसाढ़, वर्तमान आरा से लगभग चार मील दूर) एवं आरामनगर (आरा) आया था। उसके बाद लगभग १८वीं. शती तक के वहाँ के जैन कार्यकलापों की जानकारी नहीं मिल सकी है।

उन्नीसवीं शती के मध्य में यहाँ एक बड़ा ही तेजस्वी साहित्यकार हुआ, जिसकी हिन्दी की आध्यात्मिक एवं साहित्यिक रचनाओं ने धूम मचा दी। उसका नाम है महाकवि वृन्दावनदास (वि.सं. १८४८-१९०६)। आजीविका हेतु वह तत्कालीन बनारस की अंग्रेजों की एक टकसाल में सेवाकार्य करते थे। स्वाभिमानी एवं अक्खड़ स्वभाव के कारण उन्हें अँग्रेजों ने कारागार में बन्द कर दिया था, किन्तु उनकी भक्ति के चमत्कार के कारण कारागार का दरवाजा अपने-आप खुल गया था। इस कारण, अंग्रेजों ने उनसे क्षमा-याचना करते हुये उन्हें मुक्त कर दिया था। उनके द्वारा रचित सरस स्तुतियाँ हिन्दी एवं हिन्दी क्षेत्र के समस्त जनमानस में समादृत हैं। उनका पारिवारिक भवन आरा की महाजन टोली, नं. २ में अब भी बना हुआ है, किन्तु काल के थपेड़ों ने उसे जर्जर कर दिया है।

बीसवीं शती के प्रारम्भ में आरा नगर बिहार के एक प्रमुख जैनकेन्द्र के रूप में उभरकर सम्मुख आया और पिछले लगभग ९० वर्षों में उसने ऐसे अनेक ऐतिहासिक कार्य किये, जो समूचे भारतीय विद्याजगत एवं समाज के लिए प्रेरणा के स्रोत बन गये। ऐसे कार्यों में प्रथमतः भारतविख्यात "जैन सिद्धान्त भवन" की स्थापना है। इस विशाल कलापूर्ण भवन में लगभग १०,००० प्राचीन ताडपत्रीय एवं कर्गलीय (सचित्र एवं सामान्य) दुर्लभ ग्रन्थ एवं पत्र-पत्रिकाएं सुरक्षित हैं। इसके निर्माता-संस्थापक एवं संचालक श्रीदेवकुमार जी जैन एवं उनके सुपुत्र श्रीबाबू निर्मलकुमार जैन के नाम अविस्मरणीय रहेंगे। "जैनसिद्धान्त भवन ने अनेक महत्वपूर्ण जैनग्रन्थों का प्रकाशन तो किया ही, साथ ही उसने सन् १९०३ ई के आसपास "जैनसिद्धान्त-भास्कर" सह जैन ऐण्टिक्वेरी (हिन्दी-अंग्रेजी दोनों में) नामक एक उच्चस्तरीय शोध-पत्रिका का भी नियमित प्रकाशन किया, जिसके माध्यम से प्राकृत एवं जैनविद्या के शोध के क्षेत्र में एक स्वर्णिम अध्याय का सूत्रपात हुआ। वर्तमान समय में उक्त भवन "देवकुमार जैन ओरियण्टल रिसर्च इस्टीट्यूट, आरा" के नाम से एक शोध-संस्थान के रूप में मगध-विश्वविद्यालय द्वारा स्वीकृत है और जैनविद्या के विविध अंगों पर वहाँ शोधकार्य चल रहा है।

जैनधर्म के विकास के क्षेत्र में आरा के जैनसमाज का दूसरा महत्वपूर्ण कार्य है—Secred Books of the Jain Series का प्रकाशन। आरा के उत्साही युवक कुमार देवेन्द्र ने न केवल जैनसाहित्य के अंग्रेजी अनुवाद एवं समीक्षा द्वारा अहिन्दीभाषियों के लिए उक्त सीरीज के प्रकाशन की कल्पना की, अपितु देश के अनेक गणमान्य विद्वानों को प्रेरणा दी तथा जैनविद्या के लगभग ३१ ग्रन्थों का अंग्रेजी में अनुवाद, समीक्षा तथा तुलनात्मक अध्ययन उक्त सीरीज के अन्तर्गत प्रकाशित कर जैन विद्या एवं प्राकृत के इतिहास में एक नवीन अध्याय का प्रारम्भ किया। इन ग्रन्थों के कारण विदेशों में भी जैन विद्या की लोकप्रियता बढ़ी।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आरा के जैनसमाज की तीसरी देन है, श्रीजैनबाला-विश्राम, जिसकी स्थापना ब्रह्मचारिणी पण्डित चन्दाबाईजी जैन ने सन् १९२१ ई. में की थी। इस प्रथम एवं अनुपम जैन कन्या-शिक्षण-संस्था ने महिला-जगत में शिक्षा की धूम मचा दी। उसी का सुफल है कि आज देश के कोने-कोने में आरा की प्रशिक्षित महिलाएँ समाज के विभिन्न क्षेत्रों और विविध सार्वजनिक सेवा-कार्यों में संलग्न हैं। पं. चन्दाबाईजी हाल ही में कालगत हुई हैं।

आरा नगर की चौथी देन है, श्रीआदिनाथ ट्रस्ट, जिसने भोजपुर एवं रोहतास जैसे पिछड़े हुए जिलों में सार्वजनिक शिक्षा प्रसार का सर्वप्रथम संकल्प किया। इसके संस्थापक थे श्रीहरप्रसाद जैन। उनके स्वर्गवास के बाद ट्रस्ट के पदाधिकारियों ने उनके नाम पर आरा में हरप्रसाद दास जैन कॉलेज और हरप्रसाद-दास जैन हाई स्कूल की स्थापना की। ये दोनों शिक्षा संस्थाएं बिहार के उच्च शिक्षण-संस्थानों में प्रथम स्थान रखती हैं। इनके अतिरिक्त, ट्रस्ट की ओर से विशाल जैन धर्मशाला, औषधालय, ग्रन्थालय, वाचनालय, दानशाला तथा अन्ध-मूक-वधिर-विद्यालय जैसी संस्थाएं भी संचालित हैं।

आरा नगर की पाँचवी देन है, यहाँ के ४७ जैन मन्दिर। बिहार में इतने अधिक जैनमन्दिर किसी भी अन्य नगर में नहीं हैं। इनमें कुछ जैन मन्दिर, भव्य, विशाल एवं कलापूर्ण होने के कारण दर्शनीय हैं। यहाँ की चौबीसी, नन्दीश्वर एवं चन्द्रप्रभ-मन्दर शास्त्र-वर्णित पद्धति पर निर्मित है। सम्मेदशिखर एवं पावापुरी के जलमन्दिर की भी अनुकृतियां यहाँ उपलब्ध हैं। उक्त जलमन्दिर जीर्ण-शीर्ण हो चुका था, किन्तु भगवान महावीर के २५०० वें निर्वाण-महोत्सव-वर्ष की स्मृति में उसका जीर्णोद्धार कर उसे १९७४-७५ में विकसित किया गया था और इस समय भी उसे नगर के एक दर्शनीय स्थल के रूप में ततोधिक विकसित किया जा रहा है। अन्य कलात्मक वस्तुओं में मानस्तम्भ, कीर्ति-स्तम्भ, सहस्रकूट चैत्यालय एवं बाहुबलि की विशाल सौम्यमूर्ति दर्शनीय है।

जैनविद्या-सम्बन्धी शोधकार्यों में भी आरा के जैन एवं जैनेतर विद्वानों ने भारत में एक नया कीर्तिमान स्थापित किया है। इतिहास एवं संस्कृति, ज्योतिषशास्त्र एवं गणितविद्या, साहित्यक समीक्षा, अप्रकाशित हस्तलिखित ग्रन्थों का सम्पादन, समीक्षा एवं प्राचीन जैनसाहित्य में वर्णित आर्थिक जीवन, वैदेशिक व्यापार आदि विषयों पर यहाँ के विद्वानों ने अनुकरणीय ठोस कार्य किये हैं, जिनकी शिक्षा-जगत ने मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है तथा समाज-सेवी संस्थाओं एवं राज्य सरकारों ने उन्हें पुरस्कृत भी किया है।

मौलिक साहित्य प्रणयन, संगीत तथा कला के क्षेत्र में भी आरा का नाम अग्रगण्य है। श्रीदेवेन्द्रकिशोर जैन ने सन् १९३२ ई. के आसपास विविध नाटकों एवं गल्पों के लेखन से न केवल जैनजगत्, अपितु समस्त हिन्दी-जगत को भी प्रेरणा दी। शास्त्रीय संगीत तथा चित्रकला के क्षेत्र में आरा के जैन कलाकारों के नाम उल्लेखनीय हैं। इस प्रकार आरा के जैन समाज ने आरा ही नहीं भोजपुर जनपद को भी साहित्य, संगीत एवं कला का त्रिवेणी संगम बना देने का सराहनीय प्रयत्न किया है।

With best compliments from Phone- 31670 PP.

M/S VASTRA VATIKA

Exclusive Show Room of
Bombay Dyeing & Manufacturing Co.
Jail Road, Arrah

Kindly step in for the full range of Bombay dyeing products
as well as **Vivaldi Readymades**

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भोजपुर जनपद का ऐतिहासिक महत्व

डॉ. भगवतशरण उपाध्याय

भोजपुर-जनपद का महत्व इतिहास-प्रसिद्ध है। भारत के इतिहास में इस देश का कोई जनपद इतना महत्व न पा सका, जितना काशी को हृदय में बिठाये भोजपुर-जनपद को मिला। बुद्ध और अशोक का नाम किसने नहीं सुना? वर्द्धमान महावीर और चन्द्रगुप्त मौर्य का नाम किसने नहीं जाना? बुद्ध का प्रायः समूचा जीवन अधिकतर इसी भोजपुर-जनपद में उपदेश देते बीता। बौद्धों के चार प्रसिद्ध तीर्थों में तीन इसी अंचल में हैं। बुद्ध की जन्मभूमि कपिलवस्तु, उनके उपदेश का पहला अधिकारी मृगदावसारनाथ और उनकी मृत्यु-महापरिनिर्वाण की भूमि कुसीनारा-कसिया, भोजपुर के ही जनपद में थे। स्वयं बोधगया भी, जहाँ उन्होने ज्ञानलाभ किया था, भोजपुरी-बोली के दक्खिन-पूर्वी छोर के निकट ही था। बुद्ध के वैभव के रूप में भोजपुर का सांस्कृतिक साम्राज्य उत्तर में कोरिया, जापान और तिब्बत, दक्खिन में सिंहल : पूरब में चीन, मलय और हिन्देशिया तथा पच्छिम में ईराक और इस्रायल तक जा फैला और कालान्तर में ईसाई साधुवर्ग की, उनके मठों की, नींव बना।

चन्द्रगुप्त मौर्य ने भारत की भौगोलिक सीमाओं पर हमारे देश के इतिहास में पहली बार राजनीतिक व्यवस्था स्थापित की और सुदूर के दक्खिन को छोड़ समूचा भारत एक राष्ट्र बन गया। अपने भोजपुरिया वीरों की हरावल लिये वह भारत के बाहर हिन्दूकुश पर्वत के आर-पार अफगानिस्तान जा पहुँचा, जहाँ पश्चिमी एशिया के राजा और सिकन्दर के सेनापति सेल्यूकस ने उसे रण के लिए ललकारा था। ग्रीकों को अभिभूत कर उसने काबुल और आसपास के चारों ग्रीक प्रान्त उस भोजपुर के साम्राज्य में मिला लिये, जिसकी राजधानी, तत्कालीन मगध की राजधानी पाटलिपुत्र थी। चन्द्रगुप्त भोजपुरी जनपद में ही जनमा था, मल्लों के पड़ोसी पिप्पलीवन के मोरियों की सन्तान था, जिसने मगध पर अधिकार कर लिया था। उससे भी पहले, इसी भोजपुर के वीरों से अपनी सेना की हरावल बनाकर देश में पहला साम्राज्य राजा नन्द ने स्थापित किया था जिसकी उग्रकर्मा सेनाओं से डरकर सिकन्दर की सेना ने पंजाब में ही व्यास के तीर पर हथियार डाल दिये थे और उस जग्‌विजयी को उलटे पाँव लौट जाना पड़ा था।

अधिकतर इसी भोजपुरी जनपद में जैनधर्म के चलाने-वाले (प्रचारक) वर्द्धमान महावीर के उपदेश बुद्ध से भी पहले, होते रहे थे, जन्म भले ही उनका मैथिल जनपद की वैशाली में हुआ था। इस प्रकार, संसार के दो महान् विचारकों और सामाजिक क्रान्तिकारियों की विचारधारा भोजपुरी-जनपद में ही बहती रही। इसमें से एक बौद्धधर्म ने तो अपने विस्तार में संसार का छोर छू लिया और जैन धर्म ने भारत भर में तप और अहिंसा का विस्तार किया। प्रियदर्शी अशोक का महत्व किसने नहीं जाना है? बौद्ध और जैन ने जो कार्य भारतीय संस्कृति की समृद्धि, विश्वशान्ति और मानव-प्रेम की दिशा में किया, चन्द्रगुप्त मौर्य और अशोक ने वही राजतन्त्र की दिशा में किया। अशोक गोरखपुर और कसया के बीच मोरियों में जनमा अशोक तो संसार के राज्याचरण का कीर्तिमान ही बन गया। उसने दिग्विजय को त्याग धर्मविजय को अपनी राजनीति बनाई और राजनय में पहली बार भ्रातृत्व का व्यवहार किया। ग्रीक सिकन्दर अशोक के पूर्वजों के समय एक हाथ में तलवार और दूसरे हाथ में आग लिये आया था, उसी के देश में ग्रीकों के पाँचों राज्यों में, पश्चिमी एशिया, उत्तरी अफ्रीका, मिस्र और पूरबी यूरोप में अशोक ने दवाएं बटवाई, मनुष्यों और पशुओं के लिए पेड़-पौधे लगवाये। ग्रीक यहाँ मृत्यु के उपकरण लिये आये थे, भोजपुर ने उन्हें जीवन का साधन देकर जीता। तपस्वी अशोक भोजपुरी अंचल से उठा बौद्ध-धर्माकाश का अप्रतिम नक्षत्र था। गोरखपुर और देवरिया के पड़ोस के मोरियों की सन्तान चन्द्रगुप्त का पोता। उसी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अशोक ने भारतीय राष्ट्र को उसकी मुहर दी, चतुर्दिक सिंहों का मुद्रांकन दिया, उसकी ध्वजा को वह चक्र दिया, जिसका धर्ममय प्रवर्तन काशी के मृगदाव में बुद्ध ने किया था, जो गति का, मानव प्रगति का प्रतीक था, जो आज भी शान्ति के चक्रवर्ती-तथ्य का स्मारक है। भारतीय कला की चरम बिन्दु मौर्यशिल्प का जादुई आकर इसी अशोकीय भोजपुरी जनपद का अंचल चुनार था।

भारत के प्रजातन्त्रीय या पंचायती राज्यों का जो महत्व बखाना जाता है, उसकी बुनियाद भी अधिकतर इसी भोजपुरी जनपद में थी। यहीं बुद्ध को जन्म देनेवाले कपिलवस्तु के शाक्यों, यशोधरा को पैदा करने वाले रामगाँव के कोलियों, पिप्पलिवन के, चन्द्रगुप्त अशोक के, मोरियों, पावा-पडुरौना और कुसीनारा के मल्लों के पंचायती राज्य, गण और संघ थे। यहीं बुद्ध के एक गुरु आलारकालाम को जन्म देने वाले कालाम बसते थे, और यहीं ऐतरेय ब्राह्मण के भर्गों और बौद्ध-साहित्य के भग्गों की सुंसुमारगिरि का वह प्रसिद्ध नगर था, मिर्जापुर चुनार के पास, जहाँ अशोक ने अपनी लाटें बनवा, उनपर अपने उपदेश खुदवाकर, उन्हें हजार मील दूर दक्खिन हैदराबाद और मैसूर की भूमि पर खड़ा कराया था, जहाँ आन्ध्रों में हिन्दी नहीं, उसकी भोजपुरी का ही एक पूर्वगामी रूप मान्य हुआ। इसी भोजपुर के जनपद में वह काशी है, जिसके ब्रह्मदत्त राजाओं की कथा बुद्धकथित जातकों में भरी पड़ी है, जिसके राजा अश्वसेन के पुत्र पार्श्व का नाम वर्द्धमान महावीर पूर्व जैन तीर्थकरों में असाधारण महत्व का है और जिसके राजा अजातशत्रु ने विदेह जनक, अश्वपति कैकेय, प्रवहण जैवलि के साथ-साथ उपनिषद्-विद्या का प्रचार किया था। विश्वनाथ की गली में रेशमी वस्त्र और ठठेरी गली में पीतल के पात्र भण्ड जो बनते थे, उनकी बैलगाड़ियों के अटूट कारवां एक ओर पच्छिम की उज्जैनी और सौराष्ट्र, दूसरी ओर अन्तियोक और अलेप्पो की राह पहुँच यूरोप की भूमध्यसागरवर्त्ती मण्डियों को अपनी बहुमूल्य वस्तुओं से भर देते थे। यही काशी एक बार मगध और कोसल के साम्राज्यों में कशमकश का कारण बन गई थी और इसी काशी की महिमा देश के कोने-कोने में साहित्य और पुराण के पन्ने-पन्ने पर गाई जाती रही है। समूचे भारत के जिन सोलह जनपदों का बुद्ध से पहले की पुस्तकों में बखान हुआ है, उनमें अनेक जनपद इसी भोजपुरी अंचल के थे, जहाँ शंकर जैसे दार्शनिक अपने तर्क पर शान चढ़ाने आया करते थे।

मौर्यों के बाद शुंग आये, जिन्होंने विदेशियों से लोहा लिया और भोजपुर-जनपद की ही गंगा की घाटी में पुष्यमित्र शुंग ने ग्रीक विजेता मीनान्दर को आज से कोई दो हजार साल पहले धूल चटा दी थी। वास्तव में, स्यालकोट का ग्रीक-साम्राज्य तब भोजपुर में ही नष्ट हुआ, जब उसके सम्राट पुष्यमित्र ने ग्रीकों की राजधानी साकल-स्यालकोट जाकर अपना फरमान निकाला। और शायद तभी, हिन्दू-समाज को पहली व्यवस्था देनेवाली "मनुस्मृति" सम्भवतः काशी में ही, गंगा के तट पर रची गई। मात्स्यन्याय का अन्त करने वाले, भारतीय परम्परा के अराजक वन्य जीवन के अन्तक प्रथम मानवराजा यही मनु थे, जिनकी विधान-व्यवस्था के प्रधान आचार्य भृगु ने बलिया और काशी के गंगातीर पर पहले उस विधान को साधा था।

विदेशी शक-पह्लवों और ग्रीक-कुशाणों ने जब उत्तरापथ को आक्रान्त कर लिया, तब मिर्जापुर की कन्तित-कान्तिपुरी में छावनी बनाकर मध्यदेश की रक्षा करनेवाले पद्मावती के नागों ने, पीठ पर काशी के शिव का प्रतीक लिंग धारण करने वाले भारशिव नागों ने, बार-बार विदेशियों को परास्त कर बार-बार अश्वमेध किया था। प्रत्येक अश्वमेध के बाद उन्होंने काशी में अवभृथ (यज्ञान्त) स्नान किया था, जिससे उनके अश्वमेधों की संख्या दस होने से, काशी के प्रसिद्ध घाट "दशाश्वमेध" का नाम ही उनके स्मारक में पड़ गया। इस प्रकार, भारतीय स्वतन्त्रता का पहला संग्राम इसी भोजपुरी अंचल में लड़ा गया, जिसकी परिणति शकों को देश से निकाल कर शकारि-विक्रमादित्य चन्द्रगुप्त ने की। उसी "चन्द्र" ने भोजपुरी वीरों के साथ पंजाब की सातों नदियों और हिन्दूकुश को लाँघ बलख-बुखारा, बखाँ-बदख्शाँ की, आमूदरिया के तीर की, केसर की क्यारियों में अपनी हरावल के घोड़े हिराये और लौटकर दिल्ली-मेहरौली में अपना लौह-स्तम्भ गाड़ उसपर इस विजय की प्रशस्ति खुदवाई : "तीर्त्वा सप्तमुखानि येन समरे सिन्धोर्जिता वाह्लिकाः।"

गुप्तों का उदय अधिकतर त्रिवेणी तथा गंगा और सोन के संगम के बीच की ही भोजपुरी भूमि में हुआ। इसी के वीरों ने चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य के पौत्र स्कन्दगुप्त के झण्डे के नीचे लड़कर उन हूणों को परास्त किया, जिनकी पराजय की कहानी स्कन्दगुप्त ने सैदपुर भीतरी के पास पत्थर की लाट पर खुदवाई— "हूणैर्यस्य समागतस्य समरे दोर्भ्या धरा कम्पिता । भीमावर्तकरस्य..।" देश की रक्षा के लिए रणभूमि में रातें गुजा-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रने वाले उस वीरवर की भुजाओं के युद्ध में हूणों से टकरा जाने से भयानक आवर्त्त बन गया था, धरा काँप उठी थी। बंगाल के पाल और सेन राजाओं ने, वैसे ही कन्नौज के गहड़वाल राजाओं ने भोजपुरी-जनपद का महत्व समझा और उसके केन्द्र काशी में उन्होंने अपने लेख खुदवाये, उसे अपनी दूसरी राजधानी बनाया। इसी भोजपुर इलाके को उन भरों के कुलों को समुन्नत करने का श्रेय है, जिन्होंने अपना ब्राह्मण क्षत्रियेतर साम्राज्य कायम किया और जिनके अनेक कुल आज स्थानीय क्षत्रिय बन गये हैं। जमाना बदलता गया, पर उस केन्द्र का महत्व दोनों में बना रहा—उसके भारतीय पुजारियों में भी, विदेशी लुटेरों में भी। सदियों तक काशी नगरी का धन विदेशी विजेताओं की नजर पर चढ़ा रहा और समय-समय उनकी तृष्णा की प्यास बुझाता रहा।

सोलहवी सदी में भोजपुर के राजा अफगान थे और उनके सरदार शेरशाह ने वह कुछ किया, जो भारत के इतिहास में न कभी देखा गया था, न सुना गया था। भोजपुरियों की सेना लिये शाहाबाद जिले के सासाराम से जब वह चला, तब दिल्ली का तख्त हिल गया, फरगना के तैमूर का वंशज और बाबर का बेटा हुमायूँ तब शेरशाह के सामने वगैर तोप दागे, वगैर बन्दूक की एक गोली छोड़े, जो भागा, तो उसके पैर ईरान में ही जाकर टिके और इस भोजपुरिया शेरशाह ने वीर-प्रसविनी राजस्थान और पंजाब की भूमि को रौंद डाला, मालवा से गुजरात तक की भूमि पर अधिकार कर लिया। यह पहला उदाहरण था, जब जनपद और सूबे के जमीन्दारों ने उठकर देश की राजधानी दिल्ली पर कब्जा कर लिया और वे केन्द्रीय सिंहासन पर जा बैठे थे। उसी शेरशाह ने वह टोडरमल उत्पन्न किया, जिसने आगे चलकर अकबर के राज की व्यवस्था की। भला आज किसी को इस बात का कयास भी हो सकता है कि जो ग्रैण्ड ट्रंक रोड पटना से पेशावर जाती है, उसका निर्माण शेरशाह ने कराया था। या कि आज हम खेतों की पैमाइश का, चाँदी-के-सिक्कों का, डाक का, जो इस्तेमाल कर रहे हैं, उसकी बुनियाद भोजपुर के सरदार इसी शेरशाह ने डाली थी ?

यह भोजपुर-जनपद निर्भीक सन्त कबीर का है, साधक संकटमोचन संस्थापक तुलसी का, साहित्य-धुरीण प्रेमचन्द और प्रसाद का है; हरिऔध, रामचन्द्र शुक्ल और बटोहियाकार का है; इतिहासमार्तण्ड काशीप्रसाद जायसवाल का है ; तिब्बत के अन्तराल से भारतीय ग्रन्थरत्नों की राशि निकाल लानेवाले राहुल का, ज्ञानशिरोमणि मण्डनदम्पति, रामावतार शर्मा और शिवकुमार शास्त्री का है ; गणित के अप्रतिम पण्डित सुधाकर द्विवेदी, गणेशप्रसाद और अवध उपाध्याय का है, काशी-विश्वविद्यालय के प्रतिष्ठाता मदनमोहन मालवीय का है, संविधान-सभा के समारम्भयिता सच्चिदानन्द सिन्हा का है, भारतीय स्वतन्त्रता के सेनानी, स्वतन्त्र भारत की संविधान-सभा और स्वतन्त्र भारतीय राष्ट्र के प्रथम राष्ट्रपति राजेन्द्र प्रसाद का है; उस काशीनरेश चेतसिंह का है, जिसने सन् सत्तावन से भी पहले विदेशी सत्ता को चुनौती दी।

कहानी, भोजपुरी के महत्व की कहानी लम्बी है। अहम बात यह है कि वह महत्व कभी मर न सका और यह जनपद देश के इतिहास में अपने यश के सोने के पृष्ठ-पर-पृष्ठ जोड़ता गया। उसी प्रकार का वह भी पृष्ठ बना, जब सत्तावन की गदर में भोजपुरियों के बाँके कुँअरसिंह ने अँगरेजों को लोहे के चने चबवा दिये और, उसी सुनहरी कहानी की वह घटना उपसंहार बन गई, जब मंगल पाण्डे की परिणति-स्वरूप चित्तू पाण्डे ने स्वतन्त्रता-संग्राम में, सन् ४२ में, बलिया की पुलिस-लाइन में, कलक्टर और पुलिस के सुपरिण्टेण्डेण्ट को वहाँ की जेल के कैदियों की मदद से कैद कर लिया था और पूर्वी जिलों के अँगरेज अधिकारी को बड़े परिश्रम से बलिया जीत कर लखनऊ तार देना पड़ा था—"बलिया रीकैप्चर्ड"—"बलिया पर फिर से अधिकार हो गया"। और, इतिहास के जानकारों को लगा कि जैसे सर चार्ल्स नेपियर ने सिन्ध की विजय की हो।

जय भोजपुर ! जय हिन्द !

शोध पत्रिका
(आरा नागरी प्रचारिणी सभा अंक १) से साभार

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भोजपुर के विस्मृत निर्गुण कवि देवाराम बाबा

प्रो. (डॉ.) दीनानाथ सिंह

हिन्दी की संत-परम्परा निर्गुण काव्य-धारा के नाम से विख्यात है जिसके सर्वश्रेष्ठ संत महाकवि कबीरदास हुए। ज्ञानाश्रयी शाखा के कबीर आदि संत कवियों ने धर्म के बाह्याडम्बरों की भर्त्सना की, निर्गुण राम की उपासना का प्रचार-प्रसार किया, सामाजिक कट्टरताओं का निषेध किया तथा आत्म-दर्शन को ही ब्रह्म-दर्शन माना। विधिवत् शिक्षा-दीक्षा से हीन विपन्न और सामाजिक विद्रूपताओं से संघर्ष करते हुए संतों ने अपनी फुटकर रचनाओं के माध्यम से मानवतावाद का ही पोषण किया। संत कवि देवाराम बाबा इसी परम्परा के माने गए हैं।

शाहाबाद जनपद (सम्प्रति भोजपुर) के करजा गाँव, पत्रालय-उमराँव गंज, बिहिया से उत्तर गंगा-तट पर सन् १७१० ई. में कान्यकुब्ज ब्राह्मण के घर में देवराम जी का प्रादुर्भाव हुआ। इनके पिता का नाम पंडित तारापाण्डेय था। वस्तुतः पं. तारापाण्डेय अत्यन्त ही निर्धन थे और सारण जिला के "हसुआ—नगराजपुर" के निवासी थे। जीविकोपार्जन के लिए वे शाहाबाद के उक्त गाँव में आये और यहीं बालक देवाराम का प्राकट्य हुआ। अस्तु, देवाराम जी को निर्धनता और पांडित्य दोनों पैतृक सम्पदा के रूप में मिले। संत स्वभाव, संघर्षशील बालक देवाराम भक्तिकालीन कबीर, सूर और तुलसी की तरह जन्मजात प्रातिभ- प्रज्ञा से सम्पन्न होने के कारण चर्चित हो गया। समर्पण, सेवा, उदारता, त्याग, सहनशीलता, वैराग्य, पूजा-पाठ, आत्मलीनता, धर्मनिष्ठता, स्वाध्याय, संत-संगति एवं तीर्थाटन की प्रवृत्तियों ने इनके व्यक्तित्व को उदात्त बना दिया। इनके असाधारण व्यक्तित्व ने इन्हें पूरे जनपद में चर्चित कर दिया। अवतारी पुरुष की तरह दैविक प्रतिभा ने अनेक मिथिकों को जन्म दिया। कबीर और सूर की तरह अनपढ़ देवाराम जी मुक्तक पदों को गा-गा कर रचने लगे। इनके पद, भजन, होली गीत तथा अन्य भक्ति-संबंधी रचनाएँ लोक-कंठ में "श्रुति" की तरह सुरक्षित होने लगी, जो आजतक भी हैं। देवाराम जी संत देवाराम बाबा कहलाने लगे। इनके व्यक्तित्व-निर्माण में सर्वाधिक महत्व इनके आत्म-ज्ञान को है। ऐसे, इनके अन्तः साक्ष्य भजन के आधार पर इन्हें संत दरियादास का समकालीन माना जाता है।

गृहस्थ-संत (कबीर की तरह) देवाराम बाबा ने पूर्ण दाम्पत्य जीवन व्यतीत किया और इन्हें दो पुत्र-रत्न प्राप्त हुए-रन पाण्डे एवं अजायबदास। रन पाण्डे योगी के रूप में विख्यात हुए किन्तु अल्पायु में ही सर्प-दंश से उनका निधन हो गया। दूसरे पुत्र अजायबदास पिता की तरह ही संत-कवि हुए, जिनसे देवाराम बाबा की वंश-परम्परा आज वट-वृक्ष की तरह सुदृढ़, सघन और छायापूर्ण है। डॉ. रंग जी पाण्डेय, (विश्वविद्यालय प्रोफेसर, अंग्रेजी-विभाग, महाराजा कॉलेज, आरा) का संत-स्वभाव अपनी आनुवांशिकता की पूर्ण धरोहर है। पंडित सर्वानन्द पाण्डेय जी अपने जनपद में आज भी महाराज जी के नाम से पूज्य हैं। अधिवक्ता श्री बदरीश्वर कु. पाण्डेय वंश के कीर्ति-ध्वज को ऊपर उठाये हुए हैं। विस्तार भय से अन्य सदस्यों का उल्लेख संभव नहीं है। वीर कुँवर सिंह के पूर्वज भूपनारायण सिंह इनसे इतने प्रभावित हुए कि इनके परिवार को मिल्कियत के रूप में पचास एकड़ जमीन दे दी। लेकिन संत देवाराम जी ने समाधि ले ली और पूर्णायु में ब्रह्मलीन हो गये। आज भी करजा गाँव में इनका जन्म-स्थान "धर्मशाला" के रूप में जाना जाता है, जहाँ इनकी समाधि बनी हुई है, और आसपास के लोग वहाँ जाकर समाधि की पूजा-अर्चना करते हैं। अन्य भजनों को गाने वाले विशेष कर होली गीतों को सस्वर गाने वाले असंख्य लोग संत कवि देवाराम जी को कालजयी बनाये हुए हैं। अहिंसा, सत्य, अपरिग्रह, परोपकार तथा निरहंकारिता की भावना इनके वंशजों में आज भी विद्यमान है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

"बिहार राष्ट्रभाषा परिषद्" पटना द्वारा प्रकाशित "हिन्दी साहित्य और बिहार" प्रथम खंड के अनुसार संत देवाराम जी का काव्य-साहित्य विपुल है। डॉ. सर्वदेव तिवारी "राकेश" (स्वर्गीय) पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी-विभाग, महाराजा कॉलेज आरा ने एम.ए. के छात्र के रूप में अपने लघु शोध-प्रबन्ध (Dissertation) का विषय लिया था— "संत देवारामः एक अनुशीलन" जिसका निर्देशन आचार्य नलिन विलोचन शर्मा ने किया था। सम्प्रति संत देवाराम जी के वंशज श्री विशुद्धानन्द पाण्डेय जी ने अपने शोध का विषय पंजीकृत कराया है—"संत कवि देवाराम : व्यक्तित्व और कृतित्व"। इसके शोध निर्देशक प्रोफेसर डॉ. दीनानाथ सिंह स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग, ह.दा. जैन कालेज आरा (बिहार) हैं। वस्तुतः संतों की तरह इनकी रचनाएँ विपुल होकर भी (बहुत लुप्त भी हो गयी हैं) लिखित रूप से कम उपलब्ध हैं। भोजपुर जनपद के लोक कंठ में अथवा इनकी शिष्य-परम्परा के पीढ़ी-दर पीढ़ी शिष्यों द्वारा संकलित एवं पाण्डुलिपि रूप में तैयार कर सुरक्षित हैं। कुल मिलाकर ज्ञान-भक्ति से परिपूर्ण निम्नलिखित १४९८ काव्य-पंक्तियों का साहित्य उपलब्ध है, जो इन्हें बिहारी-संत कवि सिद्ध करने के लिए पर्याप्त है :—

१. "जीवन-झांकी"—	८१	पंक्तियाँ
२. "ग्राम-गीत"—	१७८	पंक्तियाँ
३. "हठयोग पदावली"—	३५८	पंक्तियाँ
४. "देवाराम पदावली"—	२६६	पंक्तियाँ
५. "राम-कृष्ण-सम्बन्धीपद"—	१६३	पंक्तियाँ
६. "भक्ति-भजनावली"—	१६७	पंक्तियाँ
७. "चालीसा"—	९	पंक्तियाँ
८. "रामाष्टक"—	११८	पंक्तियाँ
९. "कृष्णाष्टक"—	४	पंक्तियाँ
१०. "चौतीसा"—	१९४	पंक्तियाँ
कुल	१४९८	पंक्तियाँ

उक्त सभी रचनाएँ भक्तिकालीन संतों की तरह निर्बन्ध (मुक्तक) हैं। "चालीसा" में राम, शिव, दुर्गा की वंदना है। "चौतीसा" इनकी सर्वाधिक महत्वपूर्ण रचना है। वस्तुतः हिन्दी काव्य में "वर्णानुक्रमकाव्य" की परम्परा को इससे ऐतिहासिक स्रोत प्राप्त हुआ है। प्रो. सर्वदेव तिवारी "राकेश" ने अपने शोध का विषय "हिन्दी में वर्णानुक्रम काव्य-परम्परा" संत देवाराम के "चौतीसा" से ही प्रभावित होकर बनाया। संत देवाराम की फुटकर रचनाओं में "सोहर" "जेवनार", "होली" "चैता" तथा "वसंत गीत" प्रसिद्ध हैं। इनकी रचनाओं का संवेदना पक्ष वैयक्तिक तथा भक्तिपूर्ण होकर भी लोकमंगल की भावना से पूर्ण है, किन्तु कला-पक्ष संत-कवियों की तरह बहुत काव्यात्मक नहीं है। आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने कबीर को भाषा का डिक्टेटर कहा है। सधुक्कड़ी भाषा की प्रवृत्ति संत देबाराम की रचनाओं में भी है। ब्रजभाषा में रचित प्रायः सभी पद गेय हैं। कुछ उदाहरण प्रासंगिक होंगे—

(क) राम-भक्ति :—

'हे मन विषय बिसारो।
राम-चरण धरू ध्यान रे मन, विषय बिसारो॥
चरण-कमल के दरस परस ते पावत पद निरबान।
जासु चरण शिव लागि विरागी राम-चरण प्रिय प्राण॥
ब्रह्मादिक जाके गुण गावे गावत वेद पुराण।
देवाराम दया सतगुरु के भक्ति करो भगवान॥

(ख) कृष्ण-भक्ति :—

"मूरति घनश्याम सूरति लगाई के निरखो।
सुन्दर बदन कमल दल लोचन मोचन है अघनाम।
शंख चक्र गदा पदुम विराजति संतन के सुखधाम॥
अति सुकुमार कोमल हुते कोमल सोभा है बहुकाम।
देवाराम लगन लागी है गुरु के चरण निजधाम॥

(ग) हठयोग :—

"गगन में बाजता है बाजा।
बिना सतगुरु कोई जानत नाहीं त्यागे जो लाजा।
अनहद शब्द मधुर धुनि मधुरि सुनत भय माजा॥
सुरति लगाय को मूरति निहारो होरुता है आवाजा।
देवाराम भवन करे तहांवा, सेवत होय काजा।"

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(घ) रहस्यवाद :—

"पीय चितयो-चितयो सुरतिया मोको लागल रे की।
ईंगल, पींगल, सुखमणी भगु चलु नभ पिय चितयो,
अनहद बाजल गहागहि रे की।नैन गगन छवि निरखो पिय चितयो,
मोतिया जे बरिसे झमाझमि रे की।
श्वेत अरुण पीत श्याम-कमल बिच पिच चितयो,
ताहि मध्य आपन पिय पावल रे की।"

(ङ) होली गीत :—

"होरी खेले हरिजन रसिया।
तन-मन-धन सब राम चरण पर छुट गंए भव का झंसिया॥
त्रीबेणी के तीर मगन होई, अजपा जाप जपसिया,
अनहद शब्द मधुरि-धनि मधुरी, हरदम समघट बसिया।
देवारामं प्रेम रंग करि, मउज करे अविनशिया॥"

स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग,
ह. दा. जैन कॉलेज, केन्द्र—
आरा (विहार)

"मनुष्य जन्म से नहीं कर्म से महान् बनता है"
—महावीर

ह. दा. जैन कॉलेज आरा की स्वर्ण जयन्ती पर शुभ कामनाओं के साथ—

विमलकुमार विजयकुमार

चौक (कन्नीराम जी की कोठी में) आरा

फोन— प्रतिष्ठान— २१२१७; निवास— २१२५१

सभी विख्यात मिलों के फैन्सी वस्त्रों का विख्यात प्रतिष्ठान—

आकर्षक ऊनी, सूती, टेरीकॉट साड़ियाँ, सूटिंग, शर्टिंग तथा अन्य वस्त्रों के प्रसिद्ध विक्रेता, परीक्षा प्रार्थनीय।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भोजपुर के रीति-परम्परा के एक विस्मृत हस्ताक्षर : कवि पं. दिवाकर भट्ट

डॉ. गदाधर सिंह

पं. दिवाकर भट्ट रीतिकालीन परम्परा के एक महत्वपूर्ण कवि हैं। इनकी सभी रचनाएँ अभी तक अप्रकाशित हैं, इसीलिए सम्भवतः हिन्दी के किसी भी महत्वपूर्ण इतिहास-ग्रंथ में इनका नामोल्लेख नहीं मिलता। इनकी अधिकांश रचनाएँ हस्तलिखित रूप में इनके वंशजों (श्री अखिलेश कुमार भट्ट ग्राम-गउडाढ़, थाना-शाहपुर, जिला-भोजपुर) के पास सुरक्षित हैं। जिनमें से कुछ के अवलोकन का सौभाग्य मुझे मिला है।

कवि-परिचय—

कवि ने अपने ग्रन्थ "नवोढ़ा रत्न" में अपने को ब्राह्म भट्ट कुल का कहा है। इनके अनुसार वरुण की यज्ञाग्नि से जो ब्राह्म भट्ट कवि प्रकट हुआ, वह भट्ट कुल का आदि पुरुष है।

वरुण जग्य ते अग्नि ते, उपजे तीन उपत्य।
भर्ग्व गिरा प्रसिद्ध जग, अपर ब्रह्म कवि सत्य॥
ता कवि कुल में जन्म है, ब्रह्म भट्ट सुचि विप्र।
नाम दिवाकर भट्ट है, कियो ग्रन्थ लघु छिप्र॥

(नवोढ़ा रत्न : छन्द १-२)

अपने "नखसिख" ग्रंथ में कवि ने ब्रह्म भट्ट की उत्पत्ति काव्य-सृजन के लिए ब्रह्मवेदी से होना स्वीकार किया है।

रच्यो है विरंचि विप्र भेद के उचारिबे को
कविता के हेतु विधि कीन्हें ब्रह्मवेदी है॥

अन्तः साक्ष्य के आधार पर कवि का जीवन-वृत्त प्राप्त नहीं होता किन्तु इनके वंशजों के पास स्मृति-रूप में इनका जो जीवन-वृत्त उपलब्ध है वह निम्नलिखित है—

पं. दिवाकर भट्ट के पूर्वज भोजपुर जिलान्तर्गत बालबाँध नामक ग्राम के रहनेवाले थे। उन्ही में से एक श्री गुसाईजी उज्जैन की धारा नगरी से महाराजा डुमराँव के पूर्वजों के साथ राजकवि की हैसियत से डुमराँव आए। गुसाईजी के वंशजों के एक पं. केदार भट्ट जी हुए, जिन्होंने एकबार शिकार में डुमराँव के राजा होरिलसिंह की प्राणरक्षा की, जिससे प्रसन्न होकर महाराजा ने इन्हें लखराज के रूप में ३५ गाँव दे दिए— गउडाढ़, रुद्रनगर, भट्ट बलिया, तुरई डिहरा आदि। पं. दिवाकर भट्ट ने अपने वंश का निम्नलिखित परिचय दिया है—

श्री कवि धुंध के पोता भए परपोता सुभट्ट नरायन केरो
श्री नृप भूषन के लगे पुत्र सुभट्ट दिवाकर नाम है मेरो
राजसी वृत्ति सुरक्षक कालिका यम्बक नग्र में लागे बसेरो
सास्त्र पुरानन कौ चरचा अरचा नित मालिक सांझ सबेरो॥

इस प्रकार दिवाकर भट्ट के प्रपितामह नारायण भट्ट, पितामह दुंद बहादुर भट्ट एवं पिता राजभूषण भट्ट थे। नारायण भट्ट सपरिवार गउडाढ़ में ही आकर बस गए थे। पं. दिवाकर भट्ट के मित्र श्री शिवहर्ष ने इनका जो जीवन-वृत्त लिखा है, उसके अनुसार इनकी मृत्यु ४५ वर्ष की अल्पायु में ही हो गयी।

रचनाएँ:—

पं. शिवहर्ष ने इनकी निम्नलिखित रचनाओं का उल्लेख किया है—

ग्रंथ नवोढारत्न रचे, रसिकन मुदकारी।
वेस्याकेर विलास, इक ढग सुखकारी॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भाषा भूषण की टीका, की सरल रसीली।
अरु सन्ध्या सुविवेक टेक करि रच्यो सजीली॥
पुनि वरनाश्रम धरम में, सब जातिन की उतपती।
रस राजहु की की तिलक, रची अति उत्तम तपती॥
जुरहु की ग्रंथ चुटकुले, छोटे रचे सजीले।
नीतिभई सुकवित्त, देखत चित्त मजीले॥

इस प्रकार इनकी निम्नलिखित रचनाएँ सिद्ध होती हैं— (१) नवोढ़ारत्न (२) वेश्याविलास (३) भाषाभूषण की टीका (४) रसराजतिलक (५) जातियों की उत्पत्ति (६) नीति कवित्त।

इनके अतिरिक्त इनकी दो रचनाएँ और हैं— भाषा-काव्य-विलास और नखशिख। इनकी कुछ रचनाएँ फारसी में भी हैं।

नवोढ़ा-रत्न— यह पुस्तक हस्तलिखित रूप में है जो अपूर्ण रूप में उपलब्ध है। पुष्पिका नहीं होने के कारण ग्रंथ के रचनाकाल का पता नहीं चलता। लिपिकार ने भी अपना परिचय नहीं दिया है।

"नवोढ़ा-रत्न" नायिका भेद का ग्रंथ है। अवस्था के अनुसार नायिका के तीन भेद हैं— मुग्धा, मध्या और प्रौढ़ा। "नवोढ़ारत्न" में मुग्धा के छह भेदों का वर्णन है। नवोढा के सम्बन्ध में कवि का कथन है—

ज्ञात यौवना नायिका, गौने होत नवोढ़
प्रथम समागम सुरति में, करै हृदय अति प्रौढ़॥

नवोढ़ा के स्वरूप का वर्णन करते हुए कवि ने लिखा है—

स्वर्णलता से पतरी, मुख रजनीस।
कम्बु ग्रीव नायक के, कुच जुग ईस॥
करति नजाकत नवला भौंह मरोरि॥
राजकुंअरि नवला मिले, नहिं जानै रतिरीति।
बिनु सुर धुनि, बिनु ताल के, ज्यों गँवार की गीति॥

नखशिख—

नखशिख वर्णन रीतिकालीन साहित्य का एक प्रमुख उपजीव्य रहा है। इस सम्बन्ध में रीतिकालीन साहित्य अत्यन्त समृद्ध है। दिवाकर भट्ट की यह कृति अत्यधिक प्रौढ़ रचना है। इसका रचनाकाल देते हुए कवि ने लिखा है—

सम्वत ससि नव वेद ससि परिवा कातिक जान
राधा पद् को ध्यान करि, कियो ग्रंथ सुख मान॥

इस प्रकार इस ग्रंथ का रचनाकाल सं. १९१४ कार्तिक सुदी १ है। इस ग्रंथ में प्रायः सभी अंगों का काव्यात्मक वर्णन प्रस्तुत किया गया है।

ऋतु वर्णन—

पं. दिवाकर भट्ट ने भिन्न-भिन्न उक्तियों एवं नये-नये चमत्कार-वर्णनों की पृष्ठभूमि में प्रकृति को उपस्थित कर रीतिकालीन कवियों से भिन्न एक नये मार्ग का अन्वेषण किया है। यथा—

आयो रितु पावस मुरेर भेक बोले भोर
धुरवा धुँधार बूंद बारि कै झरै लगी।
भनत दिवाकर सुरेस चाप उगै व्योम,
दादुर दराज सी अवाज करसै लगी
झाड़ झाड़ बात यह रात घनघोर सोर,
चातक की सोर चँहू ओर बगरै लगी
झील झनकार बक पाँति हहकार सुनि,
नेक ना सुहात आली अंग थहरैं लगी॥

वेस्या-विलास—

इसकी हस्तलिखित प्रति कवि के वंशज गउडाढ़ निवासी पं. भैरवनाथ भट्ट के यहाँ सुरक्षित है। मोटे हाथ से बने कागज पर यह पुस्तक लिखी गयी है। ग्रंथ का आकार है ६.१/४" x.४ १/२" इसमें काली रोशनाई का प्रयोग किया गया है। लिपिकार हैं पं. प्रभाकर भट्ट। मि. फाल्गुन सुदी २ शनिवार १९५३ ई.

इस पुस्तक में वेश्याओं का चरित्र वर्णित है। वेश्याएं विनम्र होती हैं, झुक-झुककर सलाम करती हैं लेकिन बदले में सारी सम्पत्ति का हरण कर लेती हैं—

झुकि-झुकि करति सलाम लिए, कहति अनेक कलाम
आम बात यह कंचनी, कटि तें छीनति दाम॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अजब सलोना नैन जो, सोना वाके जान।
सोना लेति इनाम में, तबहीं होत मिलान॥
जर मौजा के जात ही, तुरतै करति पयान॥

वेश्या का वर्णन कवि ने एक योद्धा के रूप में किया है—

कंचुकी कवच छत्र सीसफूल सीस धरि
जरीदार जूता वाके नैन गरबीली के।
कुच नीक नेजा मुसकान है कृपान सस्त्र,
बड़े-बड़े राजा भौंह हेरत छबीली के।
सुकवि दिवाकर जु दीप जयदीप सान,
तोरे गद गॅवर गनीमन सकेली के
ऐसो ई तमाम ते तमास सेर किया करै
लिया करै दंड मानो साह बनो दिल्ली के॥

कवि के शेष ग्रन्थों को देखने का सौभाग्य मुझे प्राप्त नहीं हो सका है किन्तु जितना प्राप्त हुआ है, उसके आधार पर निःसंकोच कहा जा सकता है कि इनकी कविता रीतिकालीन परम्परा की एक सुदृढ़ कड़ी है। रीतिकालीन रूढ़िवादिता को स्वीकार कर भी कवि में स्वतंत्र चिंतन की मनोवृत्ति स्पष्ट है और यही इसकी शक्ति है। अभी यह कवि अनुसन्धित्सुओं की प्रतीक्षा में है।

स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग,
ह. दा. जैन कॉलेज परिसर,
आरा (बिहार)

LIST OF PRINCIPALS

(From 1942 to 1992)

S. No.	Name	Duration
1.	Sri Beni Madhav Agrawal	1942-44
2.	Sri Krishna Behari Gupta (Actg.)	1944-45
3.	Dr. Biman Behari Majumdar	1945-52
4.	Sri Bibhuti Bhushan Mukherjee	1952-55
5.	Sri Jagdish Chandra Das (Actg.)	1955-56
6.	Dr. Paramhans Ray	1956-57
7.	Sri Ram Prasad Lal (Actg.)	1957-59
8.	Dr. Paramhans Ray	1959-70
9.	Sri Jagdish Chandra Das	1971-73
10.	Sri Jagdish Pandey	1973-74
11.	Dr. Birkeshwar Pd. Singh (Actg.)	1974-75
12..	Sri Shamsher Jung Bahadur (Actg.)	1975-75
13.	Dr. Devendra Kumar	1975-76
14.	Sri Daroga Chaudhary (Actg.)	1976-79
15.	Dr. Kunj Behari Singh	1979-89
16.	Dr. Dinendra Chandra Jain	1989-90
17.	Sri Sheo Shankar Singh	1990-92
18.	Dr. Paras Nath Singh	1992-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शाहाबाद की आधुनिक हिन्दी-साहित्य सेवा

डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री

(डॉ. नेमिचन्द्रजी शास्त्री (स्वर्गीय) भारतीय वाङ्मय के महारथी विद्वान्, गम्भीर विचारक एवं समीक्षक के रूप में सुप्रसिद्ध हैं। नवम्बर, १९६८ ई. में उन्होंने शाहाबाद (वर्तमान में भोजपुर एवं रोहतास जिला में विभक्त) हिन्दी-साहित्य-सम्मेलन के अध्यक्ष के रूप में शाहाबादी साहित्य एवं साहित्यकारों के विषय में एक सर्वेक्षण प्रस्तुत किया था। जो शाहाबाद के हिन्दी-साहित्य के इतिहास की दृष्टि से विशेष महत्वपूर्ण है। उसका एक अंश यहाँ प्रस्तुत है। —सं.)

शाहाबाद की उर्वर भूमि प्राचीन काल से ही संस्कृत और हिन्दी दोनों ही भाषाओं के साहित्य-प्रणयन में अग्रसर रही है। महाकवि बाणभट्ट ने "कादम्बरी" और "हर्षचरित" जैसे प्रौढ़ गद्यग्रन्थों की रचना इसी जिले की पावन मिट्टी में की है। संस्कृत की इस गद्यशैली के अन्तिम आचार्य अम्बिकादत्त व्यास ने "शिवराजविजय" जैसे ऐतिहासिक गद्यकाव्य की रचना यहीं पर की है। आरा का मिश्रटोला संस्कृत नैयायिकों, वैयाकरणों एवं अलंकारशास्त्रियों की दृष्टि से सर्वाधिक गौरवमण्डित है। श्रीबबुआजी का आचार्यत्व अब भी जीवन्त है।सासाराम-अनुमण्डल के पं. श्रीरामस्वरूप पाठक, सदर अनुमण्डल के पं. श्रीरंगनाथ पाठक, बक्सर-अनुमण्डल के स्वर्गीय पं. श्रीगिरिजादत्त पाठक एवं भभुआ-अनुमण्डल के कवितार्किक-चक्रवर्ती पं. श्रीमहादेव पाण्डेय ऐसे हस्ताक्षर हैं, जिनसे लोग अपरिचित नहीं हैं। पं. श्रीरामस्वरूप पाठक का "चित्रकाव्य" ऐसी अधुनातम कृति है, जो प्रशासन की ओर से सम्मानित और पुरस्कृत है। पं. रंगनाथ पाठकजी के "षडदर्शनरहस्य" और "स्फोटदर्शन" ग्रन्थ दर्शन और व्याकरण के क्षेत्र में अद्वितीय हैं। पं. श्रीमहादेव पाण्डेय को विद्वत्ता और चरित्रनिष्ठा के कारण ही काशी जैसे पुण्यक्षेत्र के महापीठ पर जगद्गुरु शंकराचार्य के रूप में प्रतिष्ठित किया गया है। स्वर्गीय पं. श्रीगिरिजादत्त पाठक की सम्पादन-कुशलता एवं काव्य-प्रतिभा को साहित्य-जगत् भूल नहीं सकता है।

हिन्दी-गद्य के स्वरूप निर्धारण में शाहाबाद का योगदान सर्वोपरि है। पूज्य सदल मिश्र ने आरम्भ में हिन्दी गद्य को जो स्वच्छ शैली प्रदान की, उसका संस्कार और संवर्द्धन पं. श्रीईश्वरीप्रसाद शर्मा ने ८०-९० ग्रन्थ लिखकर किया है। जीवनचरित और उपन्यासग्रन्थ लिखने में श्रीशिवनन्दन सहाय, व्रजनन्दन सहाय व्रजवल्लभ, राजा राधिकारमणप्रसाद सिंह एवं आचार्य शिवपूजन सहाय का नाम गौरव के साथ लिया जाता है। इनकी अमर लेखनी से प्रसूत रचनाओं ने हिन्दी-साहित्य की अपूर्व श्रीवृद्धि की है। अलंकारशास्त्र के सर्जन में स्वर्गीय पं. श्रीरामदहिन मिश्र ने "काव्यदर्पण," काव्यालोक एवं "अप्रस्तुतयोजना" की रचना कर हिन्दी-वाङ्मय के लिए एक नया दिशा दान दिया है। "काव्यालोक" के प्रथम उद्योत में साहित्य और काव्य पर प्रत्येक दृष्टिकोण से विचार किया गया है। इस ग्रन्थ के उतरार्द्ध में कवियों की असाधारणता, प्रतिनिधित्व एवं गति-मति का पूरा-पूरा विचार किया गया है। इसके द्वितीय उद्योत में अधिभा, लक्षणा, व्यंजना एवं ध्वनि पर सांगोपांग विमर्श किया गया है। मिश्रजी की गम्भीर अध्ययन और सूक्ष्म विषयग्रहण करने की शक्ति प्रशंस्य है।

कविता के क्षेत्र में महाकवि "प्रभात" प्राचार्य मनोरंजन, कविवर कलक्टर सिंह "केसरी", श्रीबाबू दुर्गाशंकर प्रसाद सिंह "नाथ", कविवर रामदयाल पाण्डेय, पाण्डेय नर्मदेश्वर सहाय, श्रीअवधबिहारी "सुमन", श्रीप्रफुल्लचन्द्र ओझा "मुक्त", श्रीरामवचन द्विवेदी "अरविन्द", डॉ. जितराम "पाठक", प्रो. श्रीसीताराम "प्रभास", श्रीमधुसूदन ओझा स्वतन्त्र, श्रीसिद्धनाथ सहाय "विनयी", प्रो. कवि श्रीरामनाथ पाठक "प्रणयी", पण्डित श्रीविन्ध्यवासिनी दत्त त्रिपाठी, श्रीकालूराम "अखिलेश", श्री भुवनेश्वर प्रसाद "भानु", श्रीअम्बिकादत्त त्रिपाठी "व्यास", श्रीभगवती

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रसाद "राकेश", प्रो. श्रीसर्वदेव तिवारी "राकेश", श्रीदेवनन्दन, श्रीमनमोहिनीकान्त, श्रीसुरेन्द्राचार्य, श्रीराम तिवारी, श्रीगणपति "संकेत, प्रो. श्रीगोपालजी "स्वर्णकिरण", श्रीविजेन्द्र "अनिल", श्रीविश्वनाथ प्रसाद "शैदा", श्रीव्रजभूषण "आक्रान्त", श्रीजगन्नाथ मिश्र गोड़ "कमल", श्रीरामनिहाल "गुंजन", श्रीसियारामगुप्त, श्रीसन्तोष कुमार मिश्र "गोपाल", श्रीराधाकृष्ण "टण्डन", श्रीरमाकान्त, श्रीविप्र प्रभृति उल्लेखनीय हैं। महाकवि "प्रभात" और श्रीबाबू दुर्गाशंकर प्रसाद सिंह की रचनाएँ हिन्दी जगत् और भोजपुरी-क्षेत्र में विशेष रूप से समादृत हैं। जैनकवि वृन्दावन की भक्ति-विषयक रचनाएं दक्षिण भारत, गुजरात और महाराष्ट्र में हिन्दी का प्रचार कर रही हैं।

शाहाबाद की अधुनातन साहित्यिक देन :

वर्तमान युग में शाहाबाद की अनेक महनीय प्रतिभाएं विशेष रूप से प्रकाशित हुई हैं। हम यहाँ वैयक्तिक निबन्ध, कथा-कहानी, आलोचना प्रभृति साहित्यिक विधाओं के विकास का इतिवृत्त उपस्थित करने का प्रयास करेंगे। व्यक्तिगत निबन्ध लेखन के क्षेत्र में सर्वश्री प्रतिभामूर्ति प्रो. जगदीश पाण्डेय का महनीय व्यक्तित्व दार्शनिक, आलोचक एवं निबन्धकार के रूप में माँ भारती को प्राप्त है। पाण्डेयजी का "गृहदाह" निबन्ध भूले-भटके बाबुओं के लिए दीपस्तम्भ है। गहन अनुभवजन्य भावों को व्यंग्यात्मक शैली में सरलता पूर्वक अभिव्यक्त करने की कला में पाण्डेयजी अनुपम हैं। आपके निबन्धों में कार्य कारण-सम्बन्ध, स्वस्थ जीवन-संकेत एवं उद्भावना की रोचकता आदि गुण विशेष रूप से समाहित हैं।

डॉ. भुवनेश्वरनाथ मिश्र "माधव का हँसता जीवन" नामक सोलह वैयक्तिक निबन्धों का संग्रह प्रकाशित है। इन निबन्धों में उनकी उन्मुक्त धारा और वैयक्तिक चेतना का स्फुरण पाया जाता है। "साहित्य की साधना, रसोल्लास" "कला और सौन्दर्य" "कला और भक्ति" "भक्ति और भाव" एवं "आनन्द का रहस्य" आदि निबन्ध विशुद्ध विचारात्मक होने पर भी हृदयग्राही और सजीव हैं।

प्रो. रामेश्वरनाथ तिवारी का "खजूर का पेड़" शीर्षक निबन्ध-संग्रह विशेष रूप से उल्लेखनीय है। प्रो. रानाति के इन वैयक्तिक निबन्धों में साधारण और सामान्य विषय अत्यन्त रोचक शैली में निबद्ध हैं, जिनमें भावगत आत्मीयता, विनोदशीलता और स्वच्छन्द कल्पना-बिहार का परिचय प्राप्त होता है। इनकी शैली सरल, आडम्बरहीन और आत्मनिष्ठ है। लेखक बिना किसी संकोच के अपने पाठकों को जीवन-अनुभव सुनाता है और उन्हें आत्मीयता के साथ उनमें भाग देने के लिए आमन्त्रित करता है। रानाति उत्तरोत्तर अधिकाधिक ऋजु और उदार रूप में अपने भावों को अभिव्यक्त करते गये हैं। इस संग्रह के निबन्धों में "खजूर का पेड़", "ट्रकयात्रा", "माटी के राम, ठाकुर" "बेकारी", "अस्तव्यस्तता" और "मन की आँख" रूपविधान की दृष्टि से उच्च कोटि के हैं।

प्राचार्य विश्वनाथ सिंह भी वैयक्तिक निबन्धकारों में पांक्तेय हैं। आपका मंजनफल निबन्ध तत्काल पाठकों को मराल बनाने में सशक्त है। काल्पनिक चमत्कार के साथ प्रवाहमय आकर्षण होने से पाठक प्राचार्य सिंह के निबन्धों से ऊबता नहीं है। अन्य निबन्धकारों में डॉ. कपिलदेव पाण्डेय का नाम भी गौरव के साथ लिया जाता है।

कथा-कहानी के क्षेत्र में शाहाबाद की प्रतिभाएँ विशेष रूप से गतिशील हैं। हम आचार्य शिवपूजन सहाय और राजा राधिकारमण प्रसाद सिंह जैसे यशस्वी कथाकारों की चर्चा न कर नये कहानी-उपन्यास लेखकों के सम्बन्ध में ही विचार प्रस्तुत करेंगे।

स्व. श्रीत्रिवेणीप्रसाद का "विसर्जन" उपन्यास, श्रीवृन्दावनविहारी के "आकांक्षा" और "लालचन्द्र" एवं बनारसीप्रसाद "भोजपुरी" के "हलवाहा का बेटा" अर्धांगिनी", "समाज का पाप" "गरीब की आह और मैदाने जंग" लोकप्रिय रचनाएँ हैं। इन उपन्यासों द्वारा सर्वहारा समाज का जीवन्त चित्रण किया गया है। वस्तु और शिल्प दोनों ही दृष्टियों से उक्त उपन्यास उपादेय हैं। श्रीभोजपुरीजी के उपन्यासों में श्रमिकों, कृषकों और पूंजीपतियों के संघर्ष जीवन्त रूप में चित्रित हैं। विभिन्न प्रकार की सामाजिक समस्याओं के समाधान भी भोजपुरीजी ने किये हैं, साथ ही क्रिया कलाप द्वारा ही पात्रों का चरित्र चित्रित कर कथानक के गठन में पूर्ण कौशल प्रदर्शित किया है।

कथा-कहानीकारों में प्रो. रानाति, श्रीराधाकृष्ण प्रसाद भोजपुरी, श्री बा. दुर्गाशंकर-प्रसाद सिंह, श्रीमधुकर सिंह, प्रो. विजयमोहन सिंह, श्री सुबोधकुमार जैन, श्री उदयराज सिंह, श्रीनन्दकिशोर तिवारी, श्री उमाशंकर, श्रीशंकरदयाल श्रीवास्तव, श्रीरामेश्वर प्रसाद वर्मा एवं डॉ. लक्ष्मीकान्त प्रभृति के नाम उल्लेखनीय

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हैं। प्रो. रानाति का सामाजिक कहानी संग्रह "सुबह और शाम" हास्य कहानी संग्रह "गजानन शास्त्री" एवं लघुकथा संग्रह के रूप में रेल की पटरियाँ ख्यातिप्राप्त रचनाएं हैं। प्रसिद्ध आलोचक प्रो. जगदीश पाण्डेय ने "रेल की पटरियों" की भूमिका में लिखा है— रामेश्वरजी कुल मिलाकर सजग आँखों, सचेत बुद्धि और मर्मधनी हृदय से जीवन को देखनेवाले हैं। जीवन से उन्होंने प्रश्न पूछे हैं, लेकिन पद्धति और प्रभाव में साहित्य का रस है, तार्किक का वाक्छल नहीं। उन्होंने अपने को अलंकृत पदवैभव और जटिल मार्मिकताओं से दूर रखा है। समग्र में उनकी दृष्टि तीखी और अन्योक्तिगर्भित है। कोई-कोई लघुकथा तो अपनी गुरुता में महान् है, महाकाव्योचित है, जैसे "मरा हुआ पता"।

रानाति की कहानियों के सम्बन्ध में प्रो. पाण्डेयजी का उक्त कथन अक्षरशः सत्य है। हृदय को छूने की शक्ति उनकी हास्य-कहानियों और लघुकथाओं में पूर्णतया विद्यमान है।

श्रीदुर्गाशंकर बाबू की "वह शिल्पी था" नई शैली की नई कहानियों का संग्रह है। इस संग्रह में आठ कहानियाँ हैं। "दुखिया" और "शैला" इन दोनों ही कथाओं में प्रणयवंचना के दारुण दुःख की अभिव्यक्ति हुई है। बाबू साहब की कहानी-शैली में पर्याप्त तीखापन निहित है। उनकी "फरार की डायरी" में रोचकता और व्यंग्यात्मकता समान रूप में समवेत हैं।

शाहाबाद के चिन्तक विद्वान् प्रो. विजयमोहन सिंह और मधुकर सिंह के सम्पादकत्व में "६० के बाद की कहानियाँ" शीर्षक एक संग्रह प्रकाशित हुआ है। इस संग्रह का "आमुख" परिवर्तन की प्रक्रिया के विश्लेषण में लिखा गया है। इस विश्लेषण में बताया गया है कि पिछली कहानियाँ सम्बन्धों की कहानियाँ हैं। अब सम्बन्ध विघटित हो रहे हैं और उनका खोखलापन प्रकट होता जा रहा है। अतः वर्तमान कहानियों में ईमानदारी और गम्भीरता के साथ समस्याओं को सुलझाया नहीं जाता, कहानीकार समस्याओं के भीतर बँधकर उनका भोग करता है और सम्बन्धमुक्त कहानियाँ लिखी जाती हैं। इस विश्लेषण के आधार पर संग्रह की सभी कहानियाँ खरी नहीं उतरतीं, निश्चयतः, सम्पादक हृदय का यह प्रयास श्लाघनीय है।

शाहाबाद का, हिन्दी-नाटक की श्रीवृद्धि में भी महत्वपूर्ण योगदान है। नाटककारों में सर्वश्री स्व. बाबू जैनेन्द्रकिशोर जैन, डॉ. श्री सिद्धनाथ कुमार, महाराजकुमार दुर्गाशंकर प्रसाद सिंह, प्रो. श्याममोहन "अस्थाना", श्री मनमोहिनी कान्त, श्री भगवती प्रसाद राकेश आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। डॉ. सिद्धनाथ कुमार ने रेडियो-नाटकों का प्रणयन कर एक नई विधा को विकसित किया है। श्रीदुर्गाशंकरप्रसाद का "कैकेयी का त्याग" पौराणिक नाटक होने पर भी आधुनिकता से सम्पृक्त है। पौराणिक कथानक में पर्याप्त परिवर्तन कर उसे नये रूप में लिया गया है। इस नाटक के पात्रों में सच्चा बौद्धिक विकास दिखाई पड़ता है। नाटक में लम्बी प्रस्तावना अंकित की गई है। प्रो. श्याममोहन "अस्थाना" के "पूर्व और पश्चिम" नाटक में अभिनय-गुण पाया जाता है। इस नाटक का "रूपम" चलचित्र-गृह के मंच पर सफल अभिनय भी हो चुका है। "हम सब साथ हैं" मनमोहनी कान्त का राष्ट्रीय नाटक है। यह नाटक भी अभिनेय है तथा जनजागरण के हेतु इसके पठन और अभिनय उपादेय होंगे। भगवतीप्रसाद "राकेश" कवि हैं, अतः उनके "निर्वासन" नाटक में कवि-प्रतिभा मुखरित है। इस नाटक में चार अंक और चौदह दृश्य हैं। इस नाटक में एक साथ राम का अन्तर्द्वन्द्व, सीता का अलौकिक संयम एवं अविचल कर्त्तव्यनिष्ठा और ऊर्मिला की भावविह्वलता उपलब्ध है। नाट्यकला की दृष्टि से नाटक अच्छा है। दिनेशप्रसाद "शाहाबादी" का "धरती के लाल" ऐतिहासिक नाटक भी पठनीय है।

डॉ. श्रीकमलाप्रसाद मिश्र विप्र का "वीर मंगल पाण्डे" भोजपुरी-भाषा का नाटक है। इस नाटक में विप्रजी ने सन् १८५७ ई. के स्वतन्त्रता-संग्राम में आहुति देनेवाले मंगल पाण्डेय का चरित्र निबद्ध किया है। इस नाटक की आलोचना करते हुए डॉ. श्रीउदयनारायण तिवारी ने लिखा है— "खाँटी भोजपुरी भाखा आ मोहाबरा लिखे में विप्रजी बेजोड़ बाड़न। हमारा पूरा भरोसा बा कि भोजपुरी बोलेवाला लोग विप्रजी का एक नाटक के पसन्द करी। हम विप्रजी के अइसन सुन्नर नाटक लिखला खातिर बधाई देत बानी।"

"आलोचना" की समृद्धि में शाहाबाद का योगदान किसी एक प्रदेश या राज्य से अधिक है। प्रतिभामनीषी प्रो. जगदीश पाण्डेय की रचनाएँ इस विधा की सर्वोत्कृष्ट कृतियाँ हैं। "शील-निरूपण : सिद्धान्त और विनियोग", "उदात्तः सिद्धान्त और शिल्पन" एवं "कहानीकार जैनेन्द्र : अभिज्ञा और उपलब्धि" ये तीनों ही ग्रन्थ हिन्दी-आलोचना के लिए अमूल्य निधि हैं। प्रथम ग्रन्थ में चरित्र-चित्रण के सिद्धान्तों का पाण्डित्यपूर्ण विवेचन किया गया है। इस ग्रन्थ के उत्तरार्द्ध में शील के उदाहरण प्रस्तुत

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

करने के लिए "गोदान", "सुनीता" शेखरः एक जीवनी" एवं "मैला आँचल" की समीक्षा की गई है। शील की परिभाषा निर्धारित करते हुए लिखा है—"जहाँ हाव के पीछे भाव नहीं, वहाँ शील नहीं। क्रियामात्र शील नहीं, जबतक वह प्रतिक्रिया न हो। भोजन करना या साँस लेना या कोरा रास्ता चलना क्रिया-मात्र है। दुर्योधन के घर का मेवा छोड़ विदुर का शाक खाना, अपनी प्रेयसी की साँस में साँस मिलाना और चित्रकूटतीर्थ को इस भावना से जाना कि शायद राम के चरण-चिन्ह नसीब हो जायँ, शील के अन्तर्गत आयेगा।"

उपर्युक्त उद्धरण से स्पष्ट है कि लेखक ने शील की परि-भाषा अत्यन्त चिन्तन और मननपूर्वक निबद्ध की है। सौन्दर्यानु-भूति और रसास्वादन की प्रक्रिया पर भी पूरा प्रकाश डाला गया है। दुरूह विषय को विदग्धतापूर्ण उदाहरणों के माध्यम से पाठकों तक पहुँचा देने की कला में पाण्डेयजी सिद्धहस्त हैं।

द्वितीय ग्रन्थ में उदात्त भावना का अनुपम विश्लेषण किया गया है। "कामायनी" और "रामचरितमानस" में समाहित उदात्त का विवेचन उक्त दोनों रचनाओं का साहित्यिक मूल्यांकन है। असाधारण विद्वत्तापूर्वक लिखे गये इस ग्रन्थ में "आनन्द नामक एक नये रस की स्थापना भी की गई है। हिन्दी-समीक्षा के लिए पाण्डेयजी के समीक्षा-ग्रन्थ ऐसी उज्ज्वल मणि हैं, जिनका आलोक त्रिकाल में भी न्यून न होगा। पाण्डेयजी की कृश काया में ज्ञानपरमाणुओं के अतिरिक्त अन्य कुछ नहीं हैं। अतः संक्षेप में यही कहा जा सकता है, कि शाहाबाद का यह सरस्वती-पुत्र अपनी मौलिक उद्भावनाओं के कारण हिन्दी-आलोचना के लिए वरदान है। इस लाड़ले पर माँ भारती का सर्वाधिक दुलार देख-कर ईर्ष्या सी होती है।

रीतिकालीन साहित्य के संकलन और अध्ययन की दिशा में श्रीनकछेदी तिवारी के योगदान को कम बहीं माना जा सकता है। रीतिकालीन अध्ययन के लिए आज भी तिवारीजी की रच-नाएँ मील-पत्थर का कार्य करती हैं। उनके जैसा माधुर्य-भावना का विश्लेषक अन्य दिखलाई नहीं पड़ता। भक्ति-आन्दोलन के साथ माधुर्य-भक्ति का रूप और काव्यशास्त्र के विवेचन में श्रृंगार रस के महत्व का अद्भुत संयोग उपस्थित करनेवाले श्रीनकछेदी तिवारी जी का नाम सदा अमर रहेगा।

आलोचना की समृद्धि में प्राचार्य विश्वनाथ सिंह के "नाटककार प्रसाद और चन्द्रगुप्त एवं "निर्गुण काव्यधारा", डॉ. सिद्धनाथ कुमार के "हिन्दी-एकांकी शिल्पविधि का विकास, एवं "रेडियो-नाट्यशिल्प", प्रो. राजवंश सहाय "हीरा" का "भारतीय काव्यशास्त्र, डॉ. रामखेलावन पाण्डेय के "सन्तकाव्य" एवं हिन्दी-गीतिकाव्य", प्रो. स्व. सिद्धिनाथ तिवारी के "निर्गुण" "काव्यदर्शन" एवं "ध्रुवस्वामिनी की नाट्यकला," श्रीराजेन्द्र शर्मा के "हिन्दी-उपन्यासों के विकास में पाठकों की रुचि का प्रभाव" एवं डॉ. लक्ष्मीकान्त का हिन्दी-उपन्यास-साहित्य का उद्भव और विकास" ग्रन्थ विशेष महत्वपूर्ण हैं। शोध की दृष्टि से डॉ. कपिलदेव पाण्डेय का "मध्यकालीन साहित्य में अवता-रवाद, प्रो. रानाति का "हिन्दी-कविमीमांसा" एवं डॉ. राजाराम जैन का "महाकवि रइधू के अद्यावधि अप्रकाशित कुछ हस्तलि-खित ग्रन्थों का समीक्षात्मक अध्ययन" (रइधू-साहित्य का आलोचनात्मक परिशीलन) आदि भी उल्लेख्य हैं। शोध-खोज करने वालों में डॉ. राजाराम जैन, प्रो. रामनाथ पाठक "प्रणयी", प्रो. चन्द्रदेवराय एवं प्रो. शालिग्राम उपाध्याय प्रभृति भी निर्देश्य हैं।

अर्थशास्त्र-विषयक साहित्य निर्माताओं में प्रो. लालमोहर राय, प्रो. श्रीधर पाण्डेय, प्रो. उदयप्रकाश श्रीवास्तव, प्राचार्य कुंजविहारी सिंह, डॉ. कामताप्रसाद, प्राचार्य डॉ. परमहंसराय प्रभृति के नाम महत्वपूर्ण हैं। वाणिज्य-विषयक ग्रन्थों का निर्माण करने में प्राचार्य डॉ. परमहंस राय और डॉ. कामताप्रसाद के नाम स्मरणीय हैं।

रसायनशास्त्र के क्षेत्र में हिन्दी-भाषा में ग्रन्थ लिखने वाले प्रो. श्री सत्यपति सहाय और डॉ. उमाशंकर पाण्डेय को भी भुलाया नहीं जा सकता है। विज्ञान-विषयक ग्रन्थों का प्रणयन हिन्दी-भाषा में आप दोनों विद्वान् कर रहे हैं। राजनीति विज्ञान की ग्रन्थसमृद्धि में प्रो. केशव प्रसाद सिंह और प्रो. शमशेरजंग-बहादुर संलग्न हैं।

पत्रकारिता की दिशा में शाहाबाद का स्थान बहुत ऊँचा है। सम्पादकाचार्य पं. नन्दकिशोर तिवारी ने "चाँद" "भविष्य" "कर्मयोगी" और "बिहार" नामक पत्रों का बड़ी कुशलता के साथ सम्पादन किया था। श्रीपति पाण्डेय "विशाल भारत" के सहायक सम्पादक पद पर आसीन रहे थे। मधुसूदन ओझा "स्-वतन्त्र" ने "वर्मा टाइम्स" का, महामहोपाध्याय पं. सकलनारायण शर्मा ने "शिक्षा" का, श्रीकृष्णमोहन वर्मा ने "नवीन भारत" अग्र-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दूत और योगी" का, बनारसीप्रसाद भोजपुरी ने देश, "महावीर", "जनक" आर्यमहिला" "सूर्य" नवशक्ति और "स्वाधीन भारत" का, कविवर रामदयाल पाण्डेयजी ने "नवराष्ट्र" का एवं पं. दुर्गादत्त त्रिपाठी ने "शिक्षा" का सम्पादनकार्य योग्यतापूर्वक किया था।

वर्तमान में डॉ. गोपालराय "समीक्षा" का, श्रीकृष्णमोहन वर्मा "नवराष्ट्र" का, श्री नर्मदेश्वरसहाय "अँजोर" का, श्रीमती पं. ब्र. चन्दाबाई जैन "महिलादर्श" का, "भानु" जी "गाँव-घर" का एवं डॉ. जितराम पाठक "भोजपुरी-साहित्य" का सम्पादन कर रहे हैं।

श्रीगोपालनन्दन सहाय ने "नवशक्ति" और "नवराष्ट्र" में सहायक सम्पादक और सम्पादक पद पर कार्य किया है। श्रीरघुवंशनारायण सिंह ने "भोजपुरी" पत्रिका का कई वर्षों तक सम्पादन और संचालन कर शाहाबाद की सेवा की है। स्व. श्रीत्रिवेणीप्रसाद ने "बालकेसरी" नामक बालोपयोगी पत्र का सम्पादन किया था।

इधर नई प्रतिभाओं में श्रीजगदीशराय "सीमान्त" नामक मासिक पत्र का सम्पादन और प्रकाशन कर रहे हैं। श्रीविजेन्द्र "अनिल" के सम्पादन में "प्रगति" का प्रकाशन हो रहा है और प्रो. सर्वदेव तिवारी "राकेश", प्रो. विजयमोहन सिंह एवं प्रो. श्याममोहन अस्थाना के सम्पादकत्व में "सम्बोधन" प्रकाशित हुआ था।

उक्त पत्रिकाएँ सामयिक विचारधाराओं का सम्यक् परिचय प्रस्तुत करती हैं। नई कविताओं और नई कहानियों के साथ चिन्तनात्मक विचार भी प्रकाशित होते रहते हैं।

वर्तमान को अवगत करने के लिए इन लघु पत्रिकाओं का विशेष महत्व है। श्रीवेदनन्दन द्वारा प्रकाशित पत्रिका भी महत्वपूर्ण है।

तृष्णा प्राणी को पतन की ओर ले जाती है।

With best compliments from

SARASWATI FERTILISERS
Sabji Gola Road, ARRAH (Bhojpur)

Whole Sale –

(1) *Authorised Distributors & Stockist –*
- ☐ Indo-Gulf Fertilizers Chemicals Ltd.
- ☐ Godavari Fertilizers & Chemicals Ltd.
- ☐ Gujrat State Fertilizers Co. Ltd.

(2) *Authorised Dealers –*

SAIL, PPL, PPLL, IPL, R.C.F., F.C.I. H.F.C., Hindustan Livers.

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आरा नगर का वर्तमान रंगमंच *

लेखक— विजय प्रकाश

आरा पुराने शाहाबाद और नये भोजपुर जिले का मुख्यालय है। यहां के रंगमंच का इतिहास शताधिक वर्ष पुराना है। उन्नीसवीं शताब्दी के अन्तिम दशक में स्वनामधन्य जैनेन्द्र किशोर जौहर ने 'सार्वजनिक नाटक मंडली' की स्थापना कर आरा में रंगमंच की नींव डाली थी। उसके बाद सन् १९१६ ई. में पंडित ईश्वरी प्रसाद शर्मा ने एक नयी संस्था 'मनोरंजन नाटक मंडली' की स्थापना की। इस संस्था द्वारा सन् १९१७ ई. में मंचित 'सत्य हरिश्चन्द्र नाटक' की प्रस्तुति महत्वपूर्ण मानी जाती है। इसमें हिन्दी साहित्य के युगपुरुष आचार्य शिवपूजन सहाय ने शैव्या की भूमिका की थी। सन् १९३९ में विभूतिनाथ झा (डॉ. अमरनाथ झा के भाई) आरा में डिप्टी मजिस्ट्रेट बन कर आये। वे सुरुचि सम्पन्न कलाप्रेमी थे। उन्होंने वहां की मंचीय गतिविधियों को एक नयी दिशा दी और उनकी रहनुमाई में आगामी आठेक वर्षों तक आरा के रंगमंच पर बंगला नाटकों का (अनुवाद) लगातार मंचन होता रहा।

आजादी के बाद जिन हस्तियों ने आरा रंगमंच को सर्वाधिक समृद्ध किया उनमें प्रो. श्याममोहन अस्थाना, प्रो. राणाप्रताप सिन्हा और प्रो. मुरलीमनोहर प्रसाद का नाम प्रमुख है। सन् १९५६ में प्रो. श्याममोहन अस्थाना का वाराणसी से आरा आना आरा के लिए एक ऐतिहासिक घटना साबित हुई। उन्होंने 'कामायनी' नामक नाट्य संस्था स्थापित की और शताधिक मौलिक नाटकों की रचना कर अपने सभी पूर्ववर्ती नाटककारों को कोसों पीछे छोड़ दिया। उन्होंने आरा रंगमंच को स्तरीय गरिमा और अखिल भारतीय पहचान दी। उनके नाटकों में शैलीगत विशिष्टता, कथ्य का गाम्भीर्य और विषय वस्तु का वैविध्य है। उनके प्रमुख नाटक है— दूसरी सृष्टि, जमीन जो किसी की नहीं, तीसरी पीढ़ी, बुद्धम् शरणम् गच्छामि, तूफान, मेरा नाम मथुरा है, मदन दहन और पांच लाख का फार्मूला।

प्रो. राणाप्रताप सिन्हा की संस्था का नाम 'अभिनव' है तथा इनके द्वारा मंचित प्रमुख नाटक हैं— कल गुलाब खिलेंगे, ताश महल, नहले पर दहला और मुजरिम कौन?

अब तक आरा के रंगमंच पर 'यूनिवर्सिटी विट्स' का प्राधान्य था। (प्रायः सबके सब नेतृत्वकर्ता महाविद्यालयों के आचार्य हुआ करते थे) किन्तु अब जो नयी पीढ़ी आयी है (वैसे पुरानी पीढ़ी के कई लोग अभी भी सक्रिय हैं) उनमें विभिन्न क्षेत्रों के लोग हैं। इनमें श्रीमती छंदा सेन, बच्चन जी, नवेन्दु श्रीकान्त, विजय नैय्यर, राममूर्ति, निरुपमा शंकर, सिरिल मैथ्यू, भुजंग भूषण, कुमारी स्वयंवरा, सुरेन्द्र किशोर पाण्डेय आदि नाम उल्लेख्य हैं। हालांकि इनमें से कोई भी मौलिक नाटककार नहीं है, इसके लिए ये मधुकर सिंह जैसे कहानीकारों पर निर्भर करते हैं या फिर दूसरे नाटककारों के नाटक करते हैं, किन्तु इनमें अपेक्षित निर्देशन-निपुणता, विलक्षण अभिनय क्षमता और संस्थागत संस्कृतिकर्म की सुरुचिपूर्ण समृद्धि है। इनमें से कुछ रंगकर्मी तो इतने प्रतिभाशाली हैं कि उनकी तुलना राष्ट्रीय स्तर के रंगकर्मियों से की जा सकती है। उदाहरण के लिए हम श्रीमती छंदा सेन, विजय नैय्यर और निरुपमा शंकर को ले सकते हैं। इनके अतिरिक्त आज जो लोग आरा रंगमंच को गतिमान करने में अहम भूमिका अदा कर रहे हैं, उनमें प्रमुख हैं— रामेश्वर उपाध्याय, संजय सिन्हा, श्रीमती अन्नपूर्णा प्रसाद, जीतेन्द्र सुमु, प्रेमलता सिंह, कुमारी मीना, सत्य अस्थाना, अनुराधा सिंह आदि।

* नवभारत टाइम्स, पटना (दिनांक ८/१/९३) में प्रकाशित
" शाहाबाद क्षेत्र का रंगमंच" नामक लेख से साभार

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हिन्दी का उद्विकास और भोजपुर की साहित्यिक प्रगति

डॉ. राजाराम जैन

हिन्दी-भाषा का उद्भव प्राकृत-अपभ्रंश से

हिन्दी-भाषा के उद्भव एवं विकास पर पिछले चार-पाँच दशकों में पर्याप्त शोध कार्य हुए हैं। यह तो सभी मान चुके हैं कि हिन्दी का उद्भव प्राकृत-अपभ्रंश से हुआ है। विद्वानों ने तत्कालीन उपलब्ध साधनों के आधार पर उसका काल दसवीं शती के आस-पास माना है। किन्तु, जब आठवीं शती के महाकवि स्वयम्भू का साहित्य सामने आया, तब विविध कसौटियों पर कसकर महा-पण्डित राहुल सांस्कृत्यायन ने उन्हें हिन्दी का आदिकवि घोषित कर दिया। स्वयम्भू ने चौथी-पाँचवी शती के महाकवि चउमुह, ईशान एवं द्रोण का स्मरण करते हुए उनके रामायण एवं महाभारत-सम्बन्धी कुछ पद्यों को भी उद्धृत किया है। इससे प्रतीत होता है कि चौथी-पाँचवी शती में भी अपभ्रंश का विशाल साहित्य था, जो किन्हीं परिस्थितियों के कारण कालकवलित हो गया और इसीलिए तत्कालीन हिन्दी के रूप की एक कड़ी भी सम्भवतः विश्रृंखलित हो गई।

प्रियदर्शी मौर्यसम्राट् अशोक के स्तम्भ-लेखों एवं अर्द्धमागधी-प्राकृतागम के "दश- वैकालिकसूत्र" का भी भाषाविज्ञान की दृष्टि से अध्ययन हुआ है। अशोक ने आत्मनिरीक्षण की चर्चा करते हुए कहा है, मनुष्य का स्वभाव है कि वह अपने प्रशंसात्मक कार्यों को तो देखता है किन्तु दोषपूर्ण कार्यों को नहीं देखता। दोषपूर्ण कार्यों को भी प्रशंसा-कार्यों के समान ही देखना चाहिए। यही आदेश अशोक के शब्दों में द्रष्टव्य है : "कयानमेव देखति इयं मे कयाने कटे ति। नो मिन पापं देखति इयं मे पापे कटे ति। इयं वा आसनिव नामा तिं। दुपटिवेखे चु यो एस देखिए।" (स्तम्भ., ३/३) यहाँ देखने के अर्थ में "देखिए" शब्द का प्रयोग द्रष्टव्य है, जो आज भी हिन्दी के क्षेत्र में यथावत् प्रयुक्त है।

अर्द्धमागधी-प्राकृतागम के उक्त "दशवैकालिकसूत्र" का समय डॉ. के. आर. चन्द्र ने ईसापूर्व ४५२ से ४२९ तक निर्धारित किया है। उसमें उन्होंने हिन्दी के अनेक शब्दों की खोज की है। उनके अनुसार उसमें हिन्दी-शब्द प्रचुरता से प्राप्त हैं। उनका यह विस्तृत वैज्ञानिक निबन्ध "परिषद्-पत्रिका (पटना, ८/३-४) के "भाषा-सर्वेक्षणांक" में प्रकाशित है। उन्होंने "दशवैकालिकसूत्र" में प्राप्त होने वाले तद्भव एवं देश्य शब्दों की ऐसे हिन्दी-शब्दों के साथ तुलना की है, जो प्राचीन, आधुनिक और स्थानीय हिन्दी-भाषा में अथवा किंचित् परिवर्तित अर्थ में शब्दों के अर्थसंकोच अथवा विस्तार के कारण उपलब्ध हैं। उदाहरणार्थ : माउसी (मौसी) ७/१५, लोग (जनता) ८/४४, मसान (श्मशान), १९/१२, मनुस (मनुष्य), ७/२२, धोवन (धोवन), ५/१/७५, मुह (मुख), ४/१०, बीय (बीज), सत्तू (सत्तू) ५/१/७१, लोढ़ (पत्थर), ५/१/७५, चाउल (चावल), ५/१/७५, दंतवण (दतवन) ३/९, पप्पड़ (पापड़), ५/२/२१, थिग्गल (थिगली), ५/१/१५, लट्ठी (लाठी), ७/२८ आदि। उक्त तथ्य इस बात के संकेतक हैं कि हिन्दी-भाषा के उद्भव की अभी तक जो कालसीमा मान्य थी, नवीन खोजों के आलोक में उसपर पुनर्विचार की आवश्यकता है।

कबीर साहित्य के अध्येताओं ने कबीर के "रहस्यवाद" के बीजसूत्रों की खोज का प्रयत्न किया है और उपनिषदों तथा सिद्धों की रहस्यवादी विचारधाराओं से उसे प्रभावित माना है। अपभ्रंश के उपलब्ध साहित्य में छठीं शती के महाकवि जोइन्दु-कृत "परमात्मप्रकाश" एवं "योगसार" तथा दसवीं शती के मुनि रामसिंह-कृत "पाहुडदोहा" का समीक्षात्मक अध्ययन प्रकाश में आया था। सन्दर्भित कवियों ने भी आत्मा, परमात्मा, सहज-समाधि, समरसता, प्रेम, अक्षरज्ञान आदि गूढ़ विषयों पर अपने विचार व्यक्त कर बाह्य आडम्बरों एवं पाखण्डों की तीव्र भर्त्सना की है। दोहा शैली में लिखित इस साहित्य ने परवर्ती कवियों पर अपना अमिट प्रभाव छोड़ा है। उदाहरण के लिए, कुछ पद्य यहाँ प्रस्तुत हैं :

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रहस्यवादी कवि रामसिंह के दृष्टिकोण के अनुसार, मनुष्य शास्त्रों के अध्ययन के पश्चात् भी यदि आत्मा को नहीं पहचानते, तो निश्चय ही वे जड़ पदार्थ के तुल्य हैं। उनका ज्ञान कल्याणकारी पथ का प्रदर्शक नहीं हो सकता। यथा :

बहुयइँ पढियइँ मूढ पर तालु सुक्कइ जेण।

एक्कु जि अक्खरु तं पढहु सिवपुरि मम्हि जेण॥

(पाहुड, १७)

अर्थात् बहुत पढ़ा जिससे तालु ही सूख गया, फिर भी मूर्ख ही बना रहा। उस एक ही अक्षर को पढ़, जिससे शिवपुर की प्राप्ति हो सके। कबीर ने भी यही विचार व्यक्त किया है। यथा :

पोथी पढ़ि पढ़ि जग मुआ पंडित भया न कोय।

ऐकै अक्खर पीव का पढ़ै सु पंडित होय॥

(कबीर-ग्रन्थावली, पृ. २०२)

मुनि रामसिंह ने बाहरी वेश-विन्यास की तीव्र भर्त्सना की है। वे ऐसे योगी की तीव्र आलोचना करते हैं, जिसने अपने सिर को तो मुड़ा लिया है, किन्तु उसका चित्त विकारों से युक्त है। उसकी दृष्टि में तो चित्त-मुण्डन ही संसार का खण्डन करने में श्रेष्ठ सहायक है। वह कहता है :

मुंडिय मुंडिय मुंडिय सिरु मुंडिउ चित्तु ण मुंडिया।

चित्तहं मुंडणु जिं कियउ संसारहं खंडण ति कियउ॥

(पाहुड, १३५)

ठीक यही विचार कबीर के भी हैं। वे कहते हैं :

केसों कहा बिगाड़िया जे मूड़ै सौ बार।

मन को काहे न मूंडिए जामैं विषै विकार॥

(कबीर-ग्रन्थावली, पृ. २२१)

अद्वैतावस्था का वर्णन करते हुए रामसिंह कहते हैं कि जिस प्रकार नमक पानी में विलीन हो जाता है, उसी प्रकार चित्त निरंजन से मिल जाता है और जीव समरसता की स्थिति में पहुँच जाता है, तो फिर किसी अन्य समाधि की आवश्यकता नहीं रह जाती। यथा :

जिम लोणु विलिज्जइ पाणियहं तिम जइ चित्त मिलिज्ज।

समरसि हूवइ जीवड़ा काइं सहाहि करिज्ज॥

(पाहुड, १७६)

कबीर का दृष्टिकोण भी रामसिंह से अनेकशः साम्य रखता है। वह कहते हैं :

मन लागा उनमन सौ उनमन मनहि विलग्ग।

लूंण विलग्गा पाणियाँ पाँणि लूंण विलग्ग॥

(कबीर-ग्रन्थावली, पृ. १३६)

पिछली दो शतियों में जो साहित्य प्रकाश में आया है, उसे देखकर हमें गौरव का अनुभव होता है। सहस्रों की संख्या में नई-नई विधा के अनेक ग्रन्थ हमारे सम्मुख आये हैं। कल्पना कीजिए कि सन् १९२० ई. के आसपास जिस समय हिन्दी को विश्वविद्यालय एवं महाविद्यालयों के पाठ्यक्रम के योग्य नहीं माना जाता था, उस समय डॉ. श्यामसुन्दरदास प्रभृति विद्वानों ने काशी-हिन्दू-विश्वविद्यालय में अनेक संघर्षों के बाद वहाँ के पाठ्यक्रम में हिन्दी-विषय को भी स्थान दिलाया था। जहाँ उसको कॉलेजों एवं विश्वविद्यालयों में पढ़ाने योग्य नहीं समझा जाता था, वहाँ आज स्थिति यह है कि प्रत्येक स्तर पर ज्ञान-विज्ञान के अध्ययन का माध्यम हिन्दी हो, ऐसाविचार ही नहीं किया जा रहा है, अपितु कहीं-कहीं उसका प्रयोग भी किया गया है और कुछ सफलता भी मिल रही है। किन्तु, जिस मन्थर गति से यह कार्य चल रहा है, वह शोचनीय है। इस दिशा में हमें रूस एवं चीन से शिक्षा लेनी चाहिए, जिन्होंने अपनी मातृभाषा को ही ज्ञान-विज्ञान के अध्ययन एवं शोध का माध्यम बना दिया है। किन्तु, इस दिशा में हिन्दी सेवियों का यह महान् कर्तव्य है कि वे सरकार को वाध्य करें कि वह राष्ट्र की सम्पर्क-भाषा हिन्दी को अनिवार्य रूप से राष्ट्र की एकता के लिए लागू करें और विज्ञान, विधि एवं विविध यान्त्रिक विषयों के ग्रन्थ हिन्दी में तैयार कराये, जिससे प्रविधिक और वैज्ञानिक विषयों के शिक्षकों एवं छात्रों की हिन्दी की ओर अभिरुचि जागरित हो सके। विज्ञान के पारिभाषिक-शब्द कोशों की भी आवश्यकता है। इनकी भाषा में एकरूपता एवं सरलता अनिवार्य है।

भोजपुर जिला तो हिन्दी-साहित्य एवं साहित्यकारों के लिए उर्वर भूमि के रूप में प्रसिद्ध रहा है। हिन्दी-साहित्य को समृद्ध बनाने में इसके महत्वपूर्ण योगदान को विस्मृत नहीं किया जा सकेगा। हिन्दी-गद्य के निर्माताओं की प्रथम कड़ी के रूप में विख्यात पं. सदल मिश्र आरा के ही निवासी थे। उन्होंने न केवल गद्य में लिखा, अपितु उसे सजाया- संवारा भी। स्वनामधन्य साहित्यकार एवं सरस्वती के वरद पुत्र सर्वश्री बाबू शिवनन्दन सहाय, ब्रजनन्दन सहाय, पं.

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सहाय ब्रजनन्दन सहाय, पं. ईश्वरीप्रसाद शर्मा, आचार्य शिवपूजन सहाय, अखोरी यशोदानन्दन, राजा राधिकारमणप्रसाद सिंह, पं. रामदहिन मिश्र, पारसनाथ त्रिपाठी, अवधविहारी शरण, रघुनाथप्रसाद, रजनीकान्त शास्त्री, प्रो. जगन्नाथ राय, आचार्य मनोरंजन, श्यामजी शर्मा, दुर्गाशंकर प्रसाद सिंह, पं. नन्दकिशोर तिवारी, हरिद्वारप्रसाद जालान, महामहोपाध्याय पं. सकलनारायण शर्मा, आचार्य नलिनविलोचन शर्मा, गोपालदास गहमरी, भुवनेश्वरनाथ मिश्र "माधव", केदारनाथ मिश्र "प्रभात", प्रो. देवराज उपाध्याय, प्रफुल्लचन्द्र ओझा "मुक्त", जैनेन्द्रकिशोर जैन, राजेन्द्र प्रसाद, डॉ. बनारसी प्रसाद भोजपुरी, त्रिवेणीप्रसाद, सरयू पण्डा गोड़, मुरलीधर श्रीवास्तव, माहेश्वराचार्य आदि इसी पुण्यधरा की देन हैं। डॉ. रामनाथ पाठक "प्रणयी" न केवल हिन्दी एवं भोजपुरी के, अपितु संस्कृत एवं प्राकृत के भी महान् लेखकों की श्रेणी में प्रतिष्ठित हैं और उन्होने भोजपुर जिले की कीर्त्ति को दिग्दिगन्तव्यापी बना दिया है। सर्वश्री प्रो. श्याममोहन अस्थाना, प्रो. मुरलीमनोहर प्रसाद, प्रो. रामेश्वरनाथ तिवारी, प्राचार्य विश्वनाथ सिंह, डॉ. लक्ष्मीकान्त सिन्हा, डॉ. सर्वदेव तिवारी "राकेश", भगवती राकेश, डॉ. चन्द्रभूषण तिवारी, कलक्टर सिंह "केसरी" भानुजी, प्रो. जितराम पाठक, शैदाजी, संकेतजी, विन्ध्यवासिनी त्रिपाठी, रघुवंशनारायण सिंह, कालूराम अखिलेश, प्रो. राणाप्रताप सिन्हा, मधुकर सिंह, मिथिलेश्वर, महाकालेश्वर नीरजसिंह, डॉ. दीनानाथ सिंह, डॉ. गदाधर सिंह, डॉ. दुर्गविजय सिंह, डॉ. मोहिनी नहाय, श्रीमती उर्मिला कौल, मनमोहिनी कान्त, अरविन्द गुप्त, अजीत सिन्हा, सुरेशकुमार देहाती, शंकर प्रसाद, पं. ब्रजभूषण आक्रान्त, डॉ. महेन्द्र गोस्वामी, विजेन्द्र अनिल, सिरिल मैथ्यू, श्रीकान्त, रामेश्वर उपाध्याय, वीरेन्द्रकुमार गोपाल, अरविन्दकुमार, रमाकान्त पाण्डेय, पाण्डेय नर्मदेश्वर सहाय, सुबोधकुमार जैन आदि ने विविध विधाओं से हिन्दी-साहित्य को समृद्ध किया है। इस श्रृंखला की यही अन्तिम कड़ी नहीं है।

भोजपुर जिले का शायद ही ऐसा कोई नगर या गाँव हो, जहाँ हिन्दी-कवियों एवं लेखकों की लम्बी परम्परा न हो।

इतिहास साक्षी है कि विषम परिस्थितियों में साहित्यकारों के सामयिक उद्बोधनों ने ही समय-समय देश का मार्गदर्शन किया है। आज के सन्दर्भ में कवि एवं लेखकों का यह महान् कर्त्तव्य है कि वे अपनी लेखनी से ऐसे साहित्य का सर्जन करें, जिससे कि प्राणिमात्र को सुख एवं सन्तोष की प्राप्ति तथा स्वस्थ समाज एवं समृद्ध राष्ट्र का निर्माण हो सके।

हमारी आवश्यकताएँ:

जैसा कहा गया, हमारे भोजपुर जिले में साहित्यकारों की कमी नहीं है। मैं उन सभी का आह्वान करते हुए सादर निवेदन करना चाहता हूँ कि वे भोजपुर के इतिहास को सर्वांगीण एवं प्रामाणिक बनाने हेतु निम्नांकित दस-सूत्री कार्यों की ओर भी ध्यान दें:

१. प्राचीन पुराणों, ऐतिहासिक प्रशस्तियों, उत्खननों एवं कहावतों में उपलब्ध भोजपुर-सम्बन्धी सन्दर्भों का संग्रह, विश्लेषण एवं प्रकाशन।

२. प्राचीन मठों, मन्दिरों तथा व्यक्तिगत संग्रहालयों में सुरक्षित हस्तलिखित ग्रन्थों का वैज्ञानिक सूचीकरण तथा उनके विवरणों का प्रकाशन।

३. प्राचीन कवियों, लेखकों, स्वतन्त्रता-सेनानियों एवं राजवंशों के व्यक्तित्व एवं कृतित्व का सप्रमाण विस्तृत परिचय।

४. भोजपुर के नामकरण की सार्थकता एवं उसके प्राचीन इतिहास पर प्रामाणिक प्रकाश-निक्षेप।

५. भोजपुर-स्मृतिग्रन्थ का प्रकाशन।

६. भारतीय स्वतन्त्रता-संग्राम में भोजपुर जिले का योगदान।

७. ग्यारहवी शती के विद्वान् पं. दुर्गदेव-कृत "उक्तिव्यक्तिप्रकरण" में भोजपुरी-भाषा के कुछ गद्यांश प्राप्त हुए हैं, जो भाषाशैली की दृष्टि से बड़े ही महत्व के हैं। उनसे ११वीं शती की भोजपुरी-भाषाशैली का पता तो चल जाता है, किन्तु उस समय के यदि कुछ अन्य मूलग्रन्थ भी उपलब्ध हो जाय, तो उससे भोजपुरी-भाषा की प्राचीनता तथा उसके वैज्ञानिक विवेचन में पर्याप्त सहायता प्राप्त हो सकेगी।

८. सरकारी एवं गैर-सरकारी स्तर पर कुछ राशि एकत्र कर उससे एक सम्मेलन भवन के निर्माण का प्रयत्न किया जाय, जिसमें सभागार, ग्रन्थागार एवं पुरातत्व-संग्रहालय के साथ-साथ दो-तीन अध्ययन-कक्ष हों, ताकि उपयोगी ग्रन्थों, सन्दर्भ-सामग्री एवं पुरातात्विक सामग्री की सुरक्षा, व्यवस्था एवं अध्ययन-शोध आदि कार्य हो सकें।

९. हिन्दी प्रचार-प्रसार अपने परिवार से प्रारम्भ हो और सभी सदस्य यह संकल्प करें कि वे अपने सामान्य पारिवारिक

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जीवन में केवल शुद्ध हिन्दी का ही प्रयोग करेंगे। इस संकल्प से दूसरों पर भी अच्छा प्रभाव पड़ेगा।

१०. आरा-नागरी-प्रचारिणी सभा भोजपुर-जनपद की आशाओं एवं आकांक्षाओं की प्रतीक है। उसके पिछले २९ प्रकाशनों ने हिन्दी-साहित्य के गौरव को मुखर बनाने में अभूतपूर्व योगदान किया है। सन् १९७९ ई. से प्रकाशित होनेवाली "शोध-पत्रिका" में सभा की उत्साहप्रद साहित्यिक गतिविधियों पर चर्चा होती रही है। सभी साहित्यकारों एवं समाजसेवियों को चाहिए कि सभा के कार्यों में सक्रिय सहयोग प्रदान करें, जिससे उसकी योजनाओं को शीघ्र ही पूरी तरह कार्यान्वित किया जा सके।[१]

१. भोजपुर जिला हिन्दी साहित्य सम्मेलन के अध्यक्ष प्रो. डॉ. राजाराम जैन के दिनांक १६/४/८७ को किए गए अध्यक्षीय भाषण के कुछ महत्वपूर्ण अंश।

■

With best compliments from : Phone : 21253

J. K. CHEMICAL WORKS

Waliganj, Ara

Manufacturer of J. K. Broke-Fluid and J. K. Greese.

With best compliments from : Phone : 21280

RAVI TEXTILES

Dasmesh Market
Chitra Toli Road, Ara

ALL KINDS OF WHOLE SALE CLOTHS

STD/ISD
Phone—31827
(Moti Shoe Store)
Chitra Toli Road, Ara

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भोजपुर के रंगकर्मी-अभिनेता और निर्देशक : कवि भिखारी

श्री महेश्वराचार्य

(भोजपुरी-भाषा एवं संस्कृति के लिए समर्पित व्यक्तित्व का ही नाम "भिखारी" है। उन्होंने "विदेशिया" लिखकर और तद्विषयक विविध अभिनयों का स्वयं प्रदर्शन कर अपने को तदाकार बना लिया था। भिखारी और विदेशिया पर्यायवाची नाम के रूप में विख्यात हो गये। उनके मंचीन वैशिष्ट्य के कारण कलापारखियों ने उन्हें हसरत-भरी नजर से देखा, तो जनता-जनार्दन ने उनपर अपनी श्रद्धा से सुमन बिखेर दिये। भोजपुर के सांस्कृतिक विकास में "भिखारी" के अवदान निःसंन्देह ही सदा स्मरणीय रहेंगे। —सं.)

जीवन के प्रथम प्रभात में मैंने सुना तुलसी को और देखा भिखारी को। तुलसी की सुमधुर चौपाइयाँ सुनने में सुखद लगती थीं और भिखारी का नृत्य देखने में बड़ा ही मनोमोहक था। तुलसी पढ़ने-सुनने की चीज है, किन्तु भिखारी देखने ही लायक थे। उनके समय में ही अधिकांश लोगों की धारणा थी कि भिखारी के "दरसन कइली पाप गइल घोनसारी में।"

बिना किसी हिचकिचाहट के अनायास आज सबके मुँह से निकल पड़ता है— "सन्त शिरोमणि गोस्वामी तुलसीदास, लेकिन भिखारी की विद्यमानता में लोग यही कहा करते थे— "भिखारिया के नाच होत बा"। जितनि बड़े-बूढ़े थे, वे तो यहाँ तक कह डालते थे कि भिखारिया "लोग फँसवलसि टिकुली, चोली, सारी में।

भिखारी का अपना ख्याल था कि उनका "नाम भइल बा बहुत दूर ले, नाच के लबारी में।' मगर वास्तविकता यह थी कि उनकी "लबारी" देखकर समस्त उत्तरी-पूर्वी भारत मन्त्रमुग्ध था। उनके समस्त नाटक जनता के हृदय पर अंकित हो गये थे। भिखारी नाटक-लेखक कम थे, अधिक थे रंगकर्मी-अभिनेता और निर्देशक। उनके समय में जो कुछ भोजपुरी-जनपद में खुले आम हो रहा था, उन्हीं सामाजिक चित्रों का यथावत् नाटकों में प्रदर्शन करना भिखारी का कार्य था।

सर्वप्रथम भिखारी ने विरहा की शैली अपनाई और जीवन के वास्तविक दर्शन को विरहा की लय में कसकर धोबी और धोबिन के नाट्य-संवाद द्वारा लोगों को समझाया। जिस प्रकार धोबी कपड़े का मैल साफ करता है, ठीक उसी प्रकार मानव-जीवन के मल को साफ करने वाला गुरु होता है। वह गुरु मानव-जीवन के लिए अनिवार्य है। गुरु रूपी धोबी का यह "रूपक" देखने ही लायक है। यहाँ ज्ञान का "सँउनन" या "सावुन-सोडा" बनाया गया है।

"पद्मावत" में है "गुरु सुआ जेहि पन्थ देखावा" तथा भिखारी के "विदेशिया नाटक" में वही गुरु "बटोही" बन जाता है। पत्नी है जीव और परमात्मा ही है "विदेशी" इस सारगर्भ नाट्य को प्रदर्शित करने वाले भिखारी ने क्रमशः बारी-बारी से चार नाटक लिखे यथा : "विदेशिया नाटक", "कलियुग-बहार", "बहरा-बहार" और "कलियुग-प्रेम"। "विदेशिया" को भिखारी ने जीवन के यौवन में पकड़ लिया था और वे आमरण उसके लिए छटपटाते रह गये। भिखारी की अमिट प्यास "विदेशिया" के प्रति बनी रही। जब कभी वे कोई नई रचना लिखा करते थे, तब उस पुस्तिका में एक पद "विदेशिया" पर भी जोड़ देते थे। उनके इस प्रकार के फुटकल विदेशिया पर लिखे गये गीत बड़े ही अनूठे, भावपूर्ण और गम्भीर हैं। "विदेशिया" की "अन्योक्ति" विद्वन्मण्डली के लिए एक चिन्तन का विषय है। एकाध बानगी लीजिए :

(क) लागि गइल बा विदेशी में नजरिया।

(ख) रहिते देखतीं भरि नजरिया हो, उमरिया भरिया ना।
बीतत बाटे आठ पहरिया हो, डगरिया जोहत ना।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भिखारी विदेशिया लिखकर और दिखाकर उसमें पूर्णतः अपने को लय कर चुके थे। भिखारी और विदेशिया अथवा विदेशिया और भिखारी परस्पर घुले-मिले हुए हैं। विदेशिया नाम से भिखारी याद हो आते हैं और भिखारी की लोकप्रियता का कारण एकमात्र विदेशिया है। भिखारी अपने लोकप्रिय विदेशिया को लेकर अमर हैं। भिखारी ने भोजपुरी जनपद के बीच विदेशिया नाच की एक परम्परा चलाई है। नाटक या नाच किसीप्रकार का हो, मगर भोजपुरी-जनपद में उसे विदेशिया ही कहा जाता है।

भिखारी की कृतियों में विदेशिया के बाद "भाई-विरोध नाटक" अत्यन्त हृदयद्रावक उतर सका है। समाज में प्रायः सदा से यह देखने को मिल रहा है कि सहोदर भाइयों में जो कलह उत्पन्न होता है, उसके मूल में घर की स्त्रियों का ही हाथ रहता है। ऐसी भी स्त्रियाँ मुहल्ले में रहा करती हैं, जो ऊँचा-नीचा समझा-बुझाकर किसी अच्छे घर की स्त्रियों में विरोध करा देती हैं। एक ऐसी ही "कुटनी" स्त्री के समझाने बुझाने से "भाई" विरोध नाटक" के भाइयों में परस्पर विरोध उत्पन्न हो जाता है। कुटनी के चक्कर में पड़कर उस नाटक की एक स्त्री अपने पति से माया का जाल फैलाती हुई उलाहना देती है :

जहिया से अइलीं हम, तोहरा महलिया में,
सभ दिन रहलीं टहलिया में पियवा।
घर में के सभ काम, करत सूखल चाम,
रुपया के मुँह हम ना देखली हो पियवा॥

भिखारी का "गंगा दहार" का वर्णन भी बड़ा ही हृदयविदारक हुआ है। मगर, "गंगा-स्नान-नाटक" हास्य-रस का जीता-जागता चित्रण है। भोजपुरी-जनपद में गंगा-स्नान की तैयारी बड़े धूमधाम से होती है और स्त्रियाँ उस तैयारी में बड़ी ही दिलचस्पी लेती हैं :

(क) *चल सखि करे, गंगातीर असनान।*
चुपे बलमु के बान्ह नून सतुआ पिसान।।
(ख) *चल गोरिया करे गंगा असननवा।*
मीठ रस चाहीं कुछ राह के भोजनवा॥

भिखारी के गंगा-स्नान में मलेछू की पत्नी किसी ढोंगी साधु के चक्कर में पड़ गई है, ठीक उसी प्रकार, जिस प्रकार "प्रसाद" के "कंकाल" की एक स्त्री। स्त्रियों की नाड़ी-नाड़ी की पहचान भिखारी को थी। शरद बाबू के "श्रीकान्त" को देखने से भी पता चलता है कि स्त्री जाति का गहरा अध्ययन उन्हें था।

राम-साहित्य और कृष्ण-साहित्य की चर्चा भिखारी ने आंशिक रूप से की है। राम-साहित्य में भिखारी को राम-विवाह का प्रसंग अच्छा लगा है और उसी को उन्होंने अपनी कृतियों में सजाया है। मिथिला की अमराइयों में निवास करनेवाली एक छोटी-सी बालिका भोले-भाले शब्दों में मर्यादापुरुषोत्तम राम से निवेदन करती है :

लेके चलि जइब हो दुलहा। जनक किशोरी।
हम कइसे रहब हो दुलहा। मिथिला अगोरी?
नइखे कहे आवत हो दुलहा। अकिल बा थोरी।

मिथिला की कोमलवय की बालिका कुछ कहने में भी असमर्थ है। घर व्रज की गोपियाँ इतनी प्रौढ़ा हैं कि उन्हें "सवतिया डाह" जलाता जा रहा है। भिखारी के शब्दों में गोपियाँ अपनी "टीस" इस प्रकार अभिव्यक्त करती हैं :

लागल बा कुबरी के तीर करेजवा में।
कर धरि बान कृष्ण मूरति के, हो गइली बड़ा गो बीर॥

भिखारी के सैकड़ों भजनों को स्थायी साहित्य में निर्विवाद स्थान दिया जा सकता है। वे सभी भजन सूर और तुलसी के भजनों से टक्कर ले रहे हैं। उदाहरण स्वरूप शंकरजी का एक भजन देखिए :

हरदम बोल शिव बम बम बम बम।
कर त्रिशूल बसहा पर शंकर,
डमरू बजत बाटे डम डम डम डम॥
मुख में पान न भाँग चबावत,
दशन विराजत बा चम चम चम चम॥
पुरबासी निरखन बर लागे,
नारी पुरुष सभ खम खम खम खम॥
नाई भिखारी कहब कब तकले?
जब तक रही तन दम दम दम दम॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एक राम-भजन का भी नमूना लीजिए :

राम राम बोल, बिहान भइल तोता ।

भोजन सयन करत निसि बीतल, कबले लुकइब अलोता ?

कहने की आवश्यकता नहीं कि उक्त भजनों की भोजपुरी कितनी परिनिष्ठित है और चमत्कार के लिए अलंकारपूर्ण भी । उनके भजनों से स्पष्ट जाहिर होता है कि भिखारी का हृदय पूर्णतः भक्त-हृदय था । भिखारी को बराबर भक्त कवियों में स्थान दिया जायगा । वैसे, भिखारी जिस वातावरण में बसर कर रहे थे वह किसी से छिपा नहीं था । फिर भी, वे उस नाच-मण्डली में "पद्मपत्रमिवाम्भता" थे । अपनी ही मण्डली में नाचनेवालों के प्रति भिखारी की चेतावनी थीः

बेटा होके पेन्हल सारी । दाम कमाके भइल भारी ॥

चाहे खिस में देब गारी । कहेलं असले बात भिखारी ।।

समाज के प्रति भिखारी अपना सही दायित्व समझते थे और तदनुसार समाज को चेताया करते थेः

बेटा बाप से कइलन युद्ध माई के तजलन पीकर दूध ॥

नीमन नीमन चीज खाके भइली लहालोट ।

छव अंगुरी के तोई चढ़ल, तबहूँ झूला छोट ॥

वर्तमान युग की दशा देखकर भिखारी हृदय से पीड़ित होते थे और कोसा करते थे । उन्हें याद हो आती थीं बचपन की बातें, जबकि :

धान के भात मिले कहिया जहिया गोतियारो में होत परोजन ।

भाव खुलासा अनाज बिकात किनात रूपैया के दस पसेरी ।

टीकस टीप केहू नहीं खोजत, मानत साँच सफाई वही के ।

भिखारी की लिखी दर्जनों पुस्तिकाएँ हैं । कुछ अप्रकाशित कृतियाँ हैं, जो उनके पुत्र शिलानाथ के पास सुरक्षित हैं । भिखारी ने अपनी वाणी का प्रयोग सबके हितार्थ ही किया है । भक्त होने के नाते उनकी आधी कृतियाँ देवी-देवताओं के प्रति लिखी गई हैं । बहुत कुछ समाज के प्रति और कुछ हँसने-हँसाने के लिए भी । तारीफ तो यह है कि उनके कुछ नाटक जो हास्य रस के हैं, उनमें भी दर्द और करुणा है । जैसे : गंगा-स्नान नाटक (मलेछू की कहानी), घिंचोर की कहानी (घिंचोर बहार नाटक), बेटी-वियोग नाटक (झाँटुल दुल्हे की कहानी), विधवा-विलाप नाटक (एक जईफ वर की घटना) इत्यादि ।

"बूढ़ साला का बयान" और "नाई बहार" भिखारी की व्यक्तिगत चीज है । "ननद-भौजाई-संवाद" रंगीन चीज है तथा "जय हिन्दू खबर" राष्ट्रप्रेम का द्योतक है । "भिखारी-भजनमाला, देवता-विलाप, भिखारी-शंका-समाधान, यशोदा-गोपी-संवाद, राधेश्याम बहार नाटक, सीताराम-परिचय, भिखारी नव नर ओतार" आदि भजन और उपदेश की पुस्तिकाएँ हैं । भिखारी पढ़े-लिखे विद्वान् नहीं थे । श्रुतधर थे, कबीर की तरह । यही कारण है कि ग्रन्थों की बात कहीं-कहीं गलत याद हो गई है । जैसे राम की वंशावली का वर्णन इत्यादि ।

आरा, बलिया, छपरा और पटना, चारों शहरों के प्रति सहानुभूति रखते हुए भिखारी ने लिख दिया है— "चौमुख पर बा घर हमारा ।" मगर भिखारी को यदि नाज था, तो आरा के ऊपर— "आरा जिला ममहर ससुराल फुफहर आरा जिला, पुरोहित गुरु आरा परिवार ।" जीवनवृत्त-सम्बन्धी बातें भिखारी स्वयं लिखते हैंः

बारह सौ पंचानबे जहिया । सुदी पूस पंचमी रहे तहिया ॥

रोज सोमार ठीक दुपहरिया । जनम भइल ओहि घरिया ॥

भिखारी को मन्त्र प्रदान करनेवाले गुरु दूसरे थे, जिनका बखान उन्होंने अपनी कृतियों में किया है— "शिलानाथ के लागू पावें इत्यादि भी वर्णन आता है । जैसे तुलसी के मित्र टोडरमल थे, वैसे ही भिखारी के लंगोटिया साथी श्रीरामनन्द सिंह थे— "सुनीं बाबू रामनन्द सिंह कहत भिखारी ।" अक्षर का ज्ञान करानेवाले गुरु की चर्चा भिखारी इस प्रकार करते हैं : बनिया गुरु नाम भगवाना । उहे ककहरा सात पढ़ाना ॥

ज्ञान कैसे हुआ, भिखारी कहते हैं :

फुलवारी के जगह बुझाइल ।
तुलसीकृत में मन लपटाइल ॥

नाच या नाट्य का कार्यक्रम कबसे प्रारम्भ हुआ, भिखारी से सुनिए :

निजपुर में करिके रमलीला ।
नाच के तब बन्हली सिलसीला ॥

अन्त में, अपना "दैन्य" निवेदित करते हैं :

तनिको आवे न गावे बजावे ।
कहे दो, लागल लोग के भावे ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भिखारी का अपने प्रति जो ख्याल है, वही मेरा भी ख्याल उनके प्रति है। हम भिखारी के इतने निकट हैं कि उनका सही मूल्यांकन नहीं कर सकते। सही मूल्यांकन आनेवाली पीढ़ी करेगी। अभी तक मेरी दो बृहद् आलोचनात्मक पुस्तकें उनपर लिखी जा चुकी हैं। एक का नाम "जनकवि भिखारी ठाकुर" है, जो भोजपुरी-परिवार, पटना से प्रकाशित है और दूसरी पुस्तक का नाम रखा गया है— "लोक-कलाकार भक्त भिखारी" जो भिखारी ठाकुर—आश्रम, कुतुपुर (छपरा) से प्रकाशित होने जा रही है। मगर, मैं स्वयं ऐसा अनुभव करता हूँ कि भिखारी पर मैंने कुछ भी नहीं लिखा है। अभी बहुत कुछ लिखने को शेष है। भिखारी बहुत ही बड़े हैं। उनकी अपनी बड़ाई उनके दिमाग में आई थी, जिससे प्रेरित होकर निष्कपटता के साथ उन्होंने लिख दिया था :

अबहीं नाम भइल बा थोरा। जबई छूट जाई तन मोरा ॥

तेकरा बाद पचास बरीसा। तेकरा बाद बीस दस तीसा ॥

तेकरा बाद नाम हो जइहन। पंडित साधु जन जस गइहन ॥

ये हुई कुछ गौरव की बातें, मगर भिखारी में दैन्य की ही प्रधानता रही है। वे अपने दैन्य का बराबर जीवन में घोषणा करते रहे हैं। अपने को छोटा समझने और उसे प्रकाशित करने में वे तनिक भी संकोच नहीं करते थे, वरन् सिंह की तरह दहाड़ कर कहते थे : भिखारी निपढ़ नाऊ नदाना। कहते दंगल के दरम्याना ॥

भूतनाथ-आश्रम, लखनऊ

An Alumnus of our College

PURNENDRA C. JAIN (Born in 1951 at Arrah)–student of this college during 1964-68, graduated with Hons. in political science, stood first in M. A. (Pol. Sc.), Patna University, joined Delhi University as lecturer in 1973, obtained Ph. D. degree in Japanese studies from Griffith University, Australia, where he is serving as professor (Sr. Lect.) in the Faculty of Asian International Studies, was visiting professor in several Japanese Universities. Currently he has got an assignment of Visiting Academic at Oxford University in England from February 1993. He has command over Japanese language, is a regular commentator for the Australia Mass Media and has been consultant to the Australian Government. An Authority on Japanese politics and South Asian Affairs, he has to his credit several books and has published two dozen articles in various international Journals. At present, he is editor of **Japanese Studies Bulletin**, a well-regarded academic international journal on Japanese Affairs.

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भोजपुरी लोक-साहित्य

डॉ. बनारसी प्रसाद भोजपुरी,
साहित्यवाचस्पति

भोजपुरी लोक-साहित्य का इतिहास अत्यन्त प्राचीन है। यद्यपि इसकी जन्मभूमि भोजपुर जिला है, और इसी के नाम पर इस जिले के भीतर एक ग्राम भी है। यही भोजपुर ग्राम कभी ऐतिहासिक राजा भोज की राजधानी था। पर, आज इसकी व्यापकता इतनी ज्यादा बढ़ गई है कि लगभग ४ करोड़ व्यक्ति इसे बोलते हैं, और इसका विस्तार बहुत बड़े क्षेत्र में हो गया है। ऐसा प्रतीत होता है कि यहाँ के लोग जहाँ-जहाँ गये, वहाँ-वहाँ अपनी प्रधानता रखी, और प्रधानता रखने के कारण इनकी बोली की भी प्रधानता हो गई। एक ओर वर्तमान भोजपुर और रोहतास जिला तथा दूसरी ओर डालटेनगंज का आधा हिस्सा, बनारस, गाजीपुर, आजमगढ़, मिर्जापुर, बलिया, गोरखपुर, जौनपुर, देवरिया, छपरा, आधा मुजफ्फरपुर, वैशाली और मोतिहारी के लोगों के बीच भोजपुरी की प्रधानता कैसे होती? उक्त विवरण यह सिद्ध करता है कि राजा भोज भोजपुर के प्रख्यात शासक थे, और विद्वानों का उनके यहाँ दरबार लगता था। पड़ोस के जिलों में उनके शासन का प्रभाव तो था ही, दूर क्षेत्रों में भी जाकर यहाँ के लोगों ने अपना प्रभाव जमाया और भोजपुरी के माध्यम से अपना कारबार जारी रखा। इसका प्रभाव बढ़ाने का मुख्य कारण यही है कि इसका साहित्य सरल, बोधगम्य और मधुर है। इस साहित्य में किसी विषय को व्यक्त करने की अपनी मौलिक कला है, जो बिलकुल अनूठी है।

भोजपुरी का साहित्य एक है, और वह लोक-साहित्य है। जनपदीय भाषाओं में भोजपुरी का स्थान प्रधान है। भोजपुरी-भाषा की अपनी यह विशेषता है कि वह जनता मन-मानस में प्रवेश कर साहित्य का सर्जन करती है; और साहित्य के विविध सन्दर्भों से जनसमुदाय को रसप्लावित करती है। इसीलिए हिन्दी, संस्कृत, प्राकृत तथा अन्य उच्चकक्षीय भाषाओं की तरह भोजपुरी का ऐसा कोई अलग साहित्य नहीं है, जिसका सम्बन्ध जनता से बिलकुल नहीं रहता, और वह थोड़े-से ऊँचे दर्जे के विद्वानों के लिए उपयोगी सिद्ध होता है। यही कारण है कि इसका क्षेत्र संकुचित नहीं रह सका, और शनैः-शनैः इसकी व्यापकता बढ़ती गई।

भोजपुरी लोक-साहित्य की व्यापकता का दूसरा कारण इसका मौलिक माधुर्य है। इसके उच्चारण में एक अजीब आकर्षण है। फ्रेंच-भाषा की तरह इसमें सुकुमारता और तरंग की तरह उतार-चढ़ाव है। जिस प्रकार, फ्रेंच भाषा में अनुनासिक स्वर का प्रयोग अधिक होने तथा शब्दों के विलम्बित उच्चारण करने के कारण संगीतमय ध्वनि निकलती है, उसी प्रकार भोजपुरी के लोक-साहित्य के उच्चारण में भी अनुनासिक शब्दों के प्रयोग के कारण आकर्षण बढ़ जाता है। इसकी उपमाएँ विभिन्न और मौलिक है। इसमें किसी प्रतिपाद्य विषय को संक्षेप से-संक्षेप रूप में व्यक्त करने की पूर्ण क्षमता है।

यों तो, भोजपुरी-साहित्य में विभिन्न रसों का समावेश पाया जाता है, लेकिन श्रृंगार-रस की विशेषता अत्यधिक रूप से दिखाई देती है। विवाह के गीत श्रृंगार-रस का ही प्रतिनिधित्व करते हैं। श्रृंगार प्रेम को सजाता है, और दो उभरे हुए हृदयों को एक सूत्र में बँधने के लिए प्रेरणा देता है, उकसाता है। पश्चात् एक दूसरे के लिए तड़पन होती है। बेचैनी होती है, और कुर्बानी के लिए तमन्ना भी होती है। प्रेम को हम नाना प्रकार के सम्बोधनों से पुकारते हैं, और अपनी बेकली का अजहार अनेक शब्दों में करते हैं। दूसरी भाषाओं में भी प्रेम को अनेक रूपों में देखा गया है। उर्दू के प्रख्यात शायर "असगर" साहब तो प्रेमी को सलाह देते हैं कि वह प्रेम के मार्ग में आने के पहले सिर कटाकर आये; अर्थात् कुर्बान होने के लिए आये। उनके शब्दों में :

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

"असगर" हरीम इश्क में हस्ती ही जुर्म है।

रखना कभी न पाँव यहाँ सर लिये हुए॥

इसी को "कबीर" साहब ने दूसरे शब्दों में कहा है। जैसे :

जब लगि मरने से डरे, तब लगि जीवन नाहिं।

बड़ी दूर है प्रेम-घर, समझ लेहु मन माहिं॥

इन पंक्तियों में प्रेमी का घर बहुत दूर मालूम होता है और ऐसा मालूम होता है कि "कबीर" साहब प्रेमी के घर पहुँचने के लिए कुर्बानी का सेहरा बाँधने की सलाह देते हैं।

कविवर-"रहीम" का कहना है कि जब किसी को दिल में प्रेम का आसन दे दिया, तब उससे सुख-दुःख कहने की बात ही क्या है, अर्थात् प्रेमी के सुख में सुखी और दुःख में दुःखी रहना है। उनके शब्दों में :

जेहि रहीम तन-मन दियो, कियो हिये बीच भौन।

तासों सुख-दुःख कहन की, रही बात अब कौन॥

इसीलिए फिर, उन्होंने कहा :

सुमिरन सुरत लगाइ कै, सुख ते कछु न बोल।

बाहर के पट देइकै, अन्तर के पट खोल॥

यहाँ "कबीर" साहब ने प्रेम को पवित्र माना है, और उसे हृदय में ही छिपाकर रखने की बात कही है।

रवि बाबू ने अपने प्रेमी को हृदय में ही रखा। इसलिए उन्होंने उसे बराबर देखा। वह उनकी पुतलियों में बैठ गया। इसीलिए उन्होंने उसे चारों ओर देखा। कोई ऐसी जगह बाकी न रही, जहाँ उनका प्रेमी मौजूद न हो। उनकी अंगरेजी की निम्नलिखित पंक्तियाँ क्या कहती हैं ?

My beloved is ever in my heart

That is why I see him everywhere.

He is in the pupils of my eyes

That is why I see him everywhere.

इस सम्बन्ध में भोजपुरी कवियित्री नन्दरानी एक छोटी-सी कहानी में अपनी भावना व्यक्त करती है। एक नायिका किसी नायक के लिए बेचैन है। वह उससे अपना वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित करना चाहती है। उसे एक दिन मालूम होता है कि उसका प्रेमी निकट के किसी पोखरे पर आ गया है, और वह वहीं स्नान करने की तैयारी कर रहा है। यह समाचार सुनकर उसकी बेचैनी हद से ज्यादा बढ़ जाती है, और वह स्वयं उस पोखरे के नजदीक चली जाती है। उससे जब थोड़ी बात होती है, तब वह हँसकर अपने घर चली आती है और अपनी माँ से कह बैठती है कि जिसको मैं अपना वर बनाना चाहती हूँ। वह स्वयं पोखरे पर आ गया है। वह अपनी माँ को संकेत करती है कि उसे किसी तरह घर बुलाया जाय, जिसमें वह उसे अपनी भरी हुई आँखों से देख सके, और अपने संचित प्यार को अपनी आँखों के द्वारा उसकी आँखों में उड़ेल सके। तो, इस गीत पर विचार कीजिए। वह उस पोखरे में स्नान करने के लिए जाती है, और उस युवक को देखकर उससे पूछती है :

केकर हव तूंहीं आलर-दूलर अपना बएनियाँ के भाई हि

केकरा पोखरवा नेहाल बर सुन्दर मोहि के देहु न बताई ए

यहाँ प्रश्न पूछने में प्रणय के भीतर व्यंग्य छिपा हुआ है। इस प्रश्न का उत्तर वह प्रेमी हँसकर देता है :

अपना अमाजी के आलर-दूलर अपनी बहिनियाँ के भाई ए

ससुरा पोखरवा नेहाइला सूनरि हम हई कन्त तोहार ए।

यहाँ उस व्यक्ति ने स्पष्ट रूप से अपने को उसका प्रेमी पति बता दिया। प्रेम का जब अतिक्रमण होता है, तब प्रेमी के हृदय में कुछ भी छिपाने के लिए रह नहीं जाता। सच पूछिए, तो प्रेम छिपता नहीं, उबल पड़ता है। उसे दुनिया की हवा का बिलकुल ख्याल नहीं रहता। तभी तो उस पोखरे पर स्नान करने-वाले व्यक्ति ने बिना हिचक अपने को "कन्त" घोषित कर दिया और प्रेमिका के घर बिना उज्र के चला गया। कवयित्री के शब्दों में :

"अतिना बचन जब सुनेलो कवन देई धाई महल समाई ए

हमरा के ए अमा जवन वर चाहीं से वर पोखरा नेहाई ए

अतिना बचन जब सुनेली अमाजी आँगना में पलंग बिछाई ए

दुलहा दुलहिन मिलि एक भइली अँखिया में अँखिया डाल ए

अँखिया तरासल जेकरा खातिर से मिलि गइले हमार ए

इन पंक्तियों से ऐसा पता चलता है कि प्रेमिका को प्रेमी मिल गया और उसकी प्राप्ति के बाद उसकी व्यथित आँखे न सिर्फ झरने की तरह झर उठीं, बल्कि एक-दूसरे में प्रवेश कर गई। प्रेम का साक्षात्कार इसी रूप में होता है। भोजपुरी कवियों ने प्रेम

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

को अनेक रूपों में देखा है और उन्हें ज्वार-भाटा की तरह उठते और गिरते दिलों को सुकोमल तारों के आकर्षण में बाँध रखा है।

भोजपुरी लोक-साहित्य में विवाह के गीत का एक विशेष स्थान है। यह मानना पड़ेगा कि इसका प्रचार और प्रसार न सिर्फ भोजपुरी भाषा-भाषी लोगों तक ही सीमित है, बल्कि मागधी, मैथिली और उड़िया भाषा-भाषी स्त्रियों में भी, आंशिक रूप से ही सही, इसका प्रचार दिखाई पड़ता है। यह गीत स्त्रियों के गीत के नाम से प्रख्यात है। वास्तव में, स्त्रियाँ ही इसे ठिकाने से गा सकती हैं और इसके चढ़ाव-उतार की ध्वनि और भाव भी ऐसे सुकुमार और माधुर्यपूर्ण हैं कि उन्हें व्यक्त करने की क्षमता स्त्रियों की ध्वनि और भावना में विशेष रूप से पाई जाती है। यों तो, भोजपुरी के अन्य गीतों में भी मधुरिमा की प्रचुरता है, पर विवाह के गीत की मधुरिमा ऐसी है, जिसे पान कर किस साहित्यिक के मानस में आनन्द की लहरें किलोलें नहीं करने लगती। यदि इनके शब्दों के सौन्दर्य और भावों के सौष्ठव पर गम्भीरता से विचार किया जाय, तो इसका स्थान उच्चकोटि के काव्यों में समझा जायेगा। काव्य की श्रेष्ठता यही है कि उसके प्रभाव से श्रोता विमुग्ध हो जाय। काव्य के शब्दों का सौन्दर्य इसी में निहित है कि उसके एक-एक शब्द में भावों के पुंज छिपे हों। प्रबन्धकाव्यों की श्रेष्ठता भी यही है कि बड़ी-बड़ी गाथाओं को थोड़े से शब्दों की चयनिका में समेट कर रखा जाय। भोजपुरी के गीतों में, हम निरन्तर उपर्युक्त आदर्शों और सौन्दर्य को बचा रखने की क्षमता देखते हैं। उदाहरण के लिए हम निम्नांकित गीत को कसौटी पर रखना चाहते हैं।

प्रसंग उस समय का है, जिस समय महाराज जनक ने अपनी कन्या जानकी के विवाह के लिए धनुष-यज्ञ की रचना की है। उस यज्ञ में अनेक राजा और महाराजा पधारे हैं। महाराजा रामचन्द्र भी विश्वामित्र के साथ उस यज्ञ में पहुँचते हैं। धनुष कौन तोड़ेगा, यह विकट समस्या है। किसी की हिम्मत नहीं पड़ती। विश्वामित्र के इशारे पर रामचन्द्र उठते हैं और मुस्कराते हुए विशाल धनुष को तोड़ डालते हैं। अब निश्चित हो जाता है कि जानकी का विवाह रामचन्द्र के साथ होगा। महाराज जनक इसी उद्देश्य से विश्वामित्र से कहते हैं कि वे महाराज दशरथ के पास इस संवाद को भेज दें, और लिख दें कि वे श्रीरामचन्द्र के विवाह के लिए बरात के साथ सज-धज कर जनकपुर आयें। प्रसंग यहि से शुरू होता है:

सीता कुआँरी जनकपुर रघुवर दुलहा बने
रीखी सब करीं न विचार लिखी पत्री अवध भेजीं
दशरथ पतिया विचारेले साभा में सभे सुनी
रीखी के बचन सब सुनले तब मन चित हरख भरी
दसरथ साजे बरियात गहागही अजब बनी
भज पीठि ठोकले नगाड़ा नृपति बरियात चले
जब बरियतिया गोयंडवे सीता झरोखे खड़ी
इहो रे दुलहा फिरि जइहें ता केकरा से विआह करी
आइहीं सखि समुझावेली काहे सीता नीर झरी
तेजवन्त पुरुष रघुनन्दन इनके से बिआह होई
गाई के गोबर आनि के गजमोती चउकापुरी
आम के पल्लो दूबिधान तले जनवास चली
बावहीं सीता बइठाई दाहिने रघुबर बैठे
सीता व राम के विआह दीखी सब जै जै करी

उपर्युक्त गीत के भावार्थ और भाव व्यक्त करने के ढंग पर विचार कीजिए। सीता अभी तक क्वाँरी ही है, लेकिन रामचन्द्रजी "दुलहा, घोषित कर दिये गये। कारण, उन्होंने धनुष-भंग कर दुलहा बनने की शर्त पूरी कर दी। चूँकि यज्ञ के अवसर पर ऋषि लोग उपस्थित थे और विश्वामित्र जी श्रीराम के संरक्षक के रूप में आये थे, इसलिए ऐसी परिस्थिति में उनसे ही विचार कर महाराज जनक महाराज दशरथ के पास पत्र लिखने की बात कर रहे हैं। इस भाव के अन्दर शिष्टाचार की प्रतिष्ठा की गई है। महाराज जनक के पत्र को पढ़कर महाराज दशरथ चुप नहीं रह जाते, बल्कि अपने मन्त्रिमण्डल की बैठक में उसे पढ़कर सुनाते हैं, और सब की स्वीकृति प्राप्त कर सुन्दर ढंग से बरात को खूब सजाकर गाजे-बाजे के साथ ले चलते हैं। इन पंक्तियों में महाराज दशरथ के प्रजातान्त्रिक भावों की पूर्ण रूप से रक्षा की गई है।

बरात जब महाराज जनक के भवन के पास पहुँचती है, तब सीताजी खिड़की से खड़ी होकर देखती हैं और उनके मन में ऐसा विचार उठता है कि यदि किसी कारणवश यह वर वापस चले जायेंगे, तो वे फिर किससे विवाह करेंगी। बरात को खिड़की से देखना सीताजी की स्वाभाविक प्रणय-भावना को जागरित करता है। इसीलिए, इस भय से उनका प्रणयपूर्ण कोमल

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हृदय आतंकित होता रहता है कि कहीं वे (रामचन्द्रजी) विवाह करने से मुकर गये तो ! एक अजीब अन्धकार उनके मानस पर छा जाता है। कवि ने प्रणय के विशुद्ध रूप का वास्तव में यहाँ परिमार्जन कर दिया है।

सीताजी की घबराहट को देखकर उनकी सखियाँ उन्हें समझाती है, और उन्हें आश्वासन देती हैं कि निश्चय ही, तेजस्वी पुरुष श्रीरघुनन्दनजी से ही उनका विवाह होगा।

अन्त में, कवि सीता और राम का वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित कर ऋषियों द्वारा नव-दम्पति की जयकार कराता है। निःसन्देह, हम उपर्युक्त गीत में काव्य की श्रेष्ठता पाते हैं।

विवाह के गीतों में प्रणय का प्रदर्शन हास्य और व्यंग्य-पूर्ण अलंकारों में सजा कर किया गया है। भोजपुरी-गीतों में जहाँ भी श्रृंगार और प्रणय का आश्रय लिया गया है। उन सभी स्थानों पर हास्य और व्यंग्य का कुछ-न-कुछ पुट देने की चेष्टा की गई है। विवाह के गीत में ऐसे पुटों की मात्रा पर्याप्त दिखाई देती है, वह या तो कामुकता का उद्दीपन करती है या विरह की वह्नि में स्वाहा होने के लिए प्रेरणा देती है। भोजपुरी के विवाह-गीतों में प्रणय और श्रृंगार का जो भी रूप हमें दिखाई देता है, उसमें एक अजीब स्वाभाविक निश्छल पारस्परिक आकर्षण और अपनापन मालूम होता है। उसमें हमें प्रणय का सरस स्रोत अबाध गति से प्रवाहित होता दिखाई देता है। उसमें विशुद्धता रहती है, पाशविक कामुकता नहीं। उसके विरह की प्रतीक्षा में स्थिरता, आशा और पुनर्मिलन का सांकेतिक आह्लाद परोक्ष रूप से वर्तमान रहता है। विरह की अग्नि के बीच बैठकर भी प्रेमी को जलने से बचाये रखना भोजपुरी- गीतों, खासकर उसके विवाह-गीतों की विशेषता है।

विवाह होने के बाद पति-पत्नी का सम्बन्ध इतना गाढ़ा हो जाता है कि वे एक दूसरे से अलग होने के लिए तैयार नहीं होते। उनके बीच कोई भी भेद नहीं। उन्हें आपस में खुलकर बातें करने का अवसर दिया गया है। पति यदि व्यंग्य करता है, तो पत्नी भी जवाब देने से बाज नहीं आती। उस समय पति को रंचमात्र भी अपने स्वामित्व का आभास नहीं होता। नीचे लिखे गीतों के भावों पर विचार कीजिए :

पहिले ओहिले शिव गइले ससुरारी
बइठे के मिलल गउरा टूटही चटाई
आदर देखी ना भवानी !
फूटल झारी में चिरुआ एक पानी
बावाँ गोड़ धोवलों दहिन गोड़ बाकी
आदर देखी ना भवानी !
दहेज मिलल एक चेरिया जे दाई
बावाँ गोड़ लँगड़ी दहिन आँख कानी
आदर देखी ना भवानी !
दहेज मिलल एक सोरही जे गाई
दूधवा ता दूहिला निरंग गिरे पानी
आदर देखी ना भवानी !
कोदई के भात अनूना भइले भाजी
लाजे ना परोसे अइली रउरी महतारी
आदर देखी ना भवानी !
ठाठा जे कइली गउरा रउरी भउजाई
मूँस कोना धरे गइली दूई गो खेंसारी
आदर देखी ना भवानी !
डॉड़ में लँगोटी शिव मूँजिया के डण्डा
सेहु शिव हँसे गौरा नैहर तोर भिखारी
अब सुनूँ शिव दानी !

उपर्युक्त गीत में शिवजी ने गउरा पार्वती के साथ जैसा मजाक किया, वह सीधा सादा और चुभनेवाला है। वे पार्वती से कहते हैं, ऐ गउरा, जब मैं पहले-पहल ससुराल पहुँचा, तब मेरा किस प्रकार स्वागत किया गया, उसे जरा सुनो तो। जब मैं ससुराल पहुँचा, तब बैठने के लिए मुझे एक टूटी हुई चटाई दी गई। टूटी हुई झारी (बरतन) में एक चुल्लू पानी लाकर रखा गया। मुश्किल से मैं वायां पैर धो सका। दाहिना पैर बिलकुल बाकी ही रह गया। वहाँ से जब मैं चलने लगा, तब दहेज में एक ऐसी दाई मिली, जो बांये पैर से लंगड़ी और दाहिनी आँख से कानी थी। दहेज में इसके अलावा एक सोरही गाय भी मिली। पर, वह दूध की जगह पानी ही देती थी। इसके अतिरिक्त, जब मैं भोजन करने बैठा, तब तुम्हारी माँ शर्म के मारे सामने नहीं आई। इसका कारण यह था कि भोजन में कोदों

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

(एक प्रकार का अन्न) का भात और बिना नमक की तरकारी थी।

इस व्यंग्यपूर्ण उलाहना को सुनकर पार्वतीजी ने दो पंक्तियों में बहुत ही चुभता हुआ उत्तर दिया। उन्होंने कहा, "ऐ दानी शिव, अब मेरी बात सुनो। जिसकी कमर में मूँज का डण्डा और सिर्फ लंगोटी-मात्र है, वह (शिव) भी व्यंग्य से मेरे नैहर की भिखार कहे, यह आश्चर्य की बात है।" यहाँ पति-पत्नी की बातचीत के भीतर शिष्ट व्यंग्य दिखाई देता है। शिव पार्वती को प्यार करते हैं, इसीलिए उन्होंने पार्वती के व्यक्तित्व पर जरा भी छींटाकशी नहीं की। पार्वती ने शिव को दानी कहकर पुकारा है। इसका रहस्य यह है कि अव-ढरदानी शिव ने अपने हृदय में सँजोया हुआ प्यार पार्वती को दान में दे दिया है। यहाँ दोनों ने पारस्परिक सम्बन्ध को बिलकुल अक्षुण्ण रखा है। यह कहना सम्भवतः अनुपयुक्त नहीं होगा कि इन दोनों तपस्या से परिपूर्ण प्राणियों के प्रणय ने अकस्मात् चुहल समेट कर व्यावहारिक जगत् के सामने अपने को झंकृत करने की चेष्टा की है।

विवाह के गीत विभिन्न अवसरों पर गाये गये हैं, जैसे मंगल-गीत, मँड़वा के गीत, कोहबर के गीत, बेटी की विदाई के गीत इत्यादि। इन सभी गीतों में अधिकतर गीत ऐतिहासिक राम और कृष्ण से सम्बद्ध हैं, जो सभी अवसरों पर गाये जाते हैं। उदाहरण—स्वरूप कुछ गीतों को पाठकों के विचारार्थ में अंकित कर रहा हूँ।

जब बराती बेटी के घर भोजन करने जाते हैं, तब मँड़वा में वर के साथ उसके सम्बन्धी भी भोजन करने के लिए बैठते हैं। उस समय के लिए एक गीत है। वर को कन्हैया माना गया है। राधा-रूपी वधू की सखियाँ कृष्ण-रूपी वर को गालियाँ देती हैं। नीचे की पंक्तियों में पढ़िए।

"जेवन बैठे कृष्ण कन्हैया देहि सखी सब गारी जी।
कैसे देउँ गोपाल ही गारी दुइ बाप एक महँतारी जी।
हम तो तीन लोक के ठाकुर हमको कैसी गारी जी।
जो तुम तीनों लोक के ठाकुर काहे आये ससुरारी जी।
जो तुम गारी देहु सब सखिया हम लेबो पटुका पसारी जी।
ऐसी गारी काहे को कहिए गारी है प्रेमपियारी जी।

तात्पर्य यह है कि कृष्ण को सखियाँ गाली देती हैं और कृष्ण भी यही उत्तर देते हैं कि गालियाँ उन्हें प्रिय हैं। प्रायः सभी वरों को ससुराल की गालियाँ प्रिय लगती हैं।

अब दूसरे गीत के भाव को समझिए। यह कोहबर का गीत है। रिवाज के अनुसार कोहबर ससुराल में सजाया जाता है। साली और सरहज कोहबर को खूब सजाती हैं। दीवारों पर अनेक भाव-भंगिमाओं से युक्त व्यंग्यात्मक चित्र बनाये जाते हैं। कुछ गालियाँ भी लिखी जाती हैं। कोहबर वह स्थान है, जहाँ पति-पत्नी का प्रथम मिलन होता है। रात्रि होने के बाद वर और वधू को उसी कोहबर में बैठा दिया जाता है, और उनके मनोरंजन के लिए अनेक चीजें रखी रहती हैं। गीत इस प्रकार है :

कहडबर लिखन चलती सरहजिया हो हाते गुलेला मुखपान ए।
अइसन कोहबर लीखीह सरहजिया हो जाहि देखी नैना जुड़ाई ए।
आरी-पारी लीखीह बाँस पुरइनिया बीचे-बीचे लीखीह सोहाग ए।
ताही कोहबर सुनेले कवन दुलहा जवरे कवन देई रानी ए।
कवन हई सासु कवन हई सरहज कवन हई साली हमार ए।
पीअर ओढ़न पोअरी पीताम्बर उहे हई अम्मा हमार ए।
लाली चुनरिया रे नैना कजरवा उहे हई भाभी हमार ए।
दौड़ी के अइले जे मारी पराइली उहे हई बहिनी हमार ए।
एही कोहबरवा प्रभु भउजी के लीखल उहे भाभी प्राण अधार ए।

भावार्थ यह है कि सरहज ने कोहबर को लिख कर सजाया और अनेक सुहाय के चिन्ह बनाये। पश्चात् दुलहा और दुलहिन का वहीं पर प्रथम मिलन हुआ। दुलहा ने दुलहिन से पूछा—"कौन मेरी सास है। कौन सरहज और कौन साली है। कोहबर को सजाने में किन-किन का हाथ है? दुलहिन ने परिचय देते हुए कहा—जिसने पीला वस्त्र धारण किया है, वही मेरी माँ है, जिसने लाल साड़ी पहन कर आँखों में काजल लगाया है, वही मेरी भाभी है, और उसी ने कोहबर को लिखा है। वह मुझे बहुत प्यार करती है। वह जो दौड़ कर आई और धीरे-से आपको मार कर भाग गई, वह मेरी बहन है।

पाठक भलीभाँति सोच सकते हैं कि कोहबर में भी न कहीं कामुकता है और न अशिष्टता ही। भोजपुरी कवियों ने सर्वत्र इन दोनों बातों पर बहुत ध्यान दिया है।

बेटी की विदाई के अवसर पर जो गीत गाये गये हैं, उनमें करुणा अधिक है। उन्हीं गीतों के कुछ उदाहरण देकर मैं यह प्रतिपादित करने की चेष्टा करूँगा कि भोजपुरी कवियों ने करुण रस में भी अपनी मौलिकता को अक्षुण्ण रखा है। निम्न-लिखित गीत को पढ़िए :

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

"कहवाँ के चनवाँ कहाँ कइले जाला मोरे प्रानहरी
कहवाँ के दुलहा गवन कइले जाला मोरे प्रानहरी
पूरब के चनवा पछिम कइले जाला मोरे प्रानहरी
अनजानुपुर के दुलहा गवन कइले जाला मोरे प्रानहरी
सभवो बइठल ससुर करे मनुहारी मोरे प्रानहरी।
दिन दस रहै देहु धिअवा हमार मोरे प्रानहरी।
जहुँ रउरा ऐ ससुर धिअवा पियारी मोरे प्रानहरी
काहे के सजन बटोरली हाँ रउरा प्रानहरी
दिन दस रहे देहु धिअवा हमार मोरे प्रानहरी
जहुँ रउरा ऐ ससुर धिअवा पियारी मोरे प्रानहरी।
काहे के पेन्हवलीं चुनरिया त मोरे प्रानहरी।
सरवा करे मनुहारी मोरे प्रानहरी
दिन दस रहे देहु बहिनी हमार मोरे प्रानहरी
जहुँ रउरा ऐ सार बहिनी पियारी मोरे प्रानहरी
काहे रावाँ लावा मेरवलीं मोरे प्रानहरी
भँड़सर बइठल सरहज करे मनुहारी मोरे प्रानहरी
दिन दस रहे देहु ननदी हमारी मोरे प्रानहरी
जहुँ रउरा ऐ सरहज ननदी पियारी मोरे प्रानहरी
काहे के ऐ सरहज कोहबर रचवलीं मोरे प्रानहरी
अरज मिनत सब भइले बेकार मोरे प्रानहरी
कइसन बेदरदी बन के बेटी ले जाला मोरे प्रानहरी

इस गीत में यह दिखाया गया है कि बेटी की बिदाई के अवसर पर सास, ससुर, सलहज और साला, सभी वर से दस दिनों तक नवपरिणीता कन्या को नैहर में रहने देने का अनुरोध करते हैं, लेकिन वह अनुरोध को अस्वीकार कर उक्त कन्या, अर्थात् अपनी स्त्री, को अपने घर ले जाता है और सभी को अपने अकाट्य तर्कों से मूक कर देता है। उसका कहना है कि जब विवाह के सभी रस्म पूरे हो गये और कन्या उसकी स्त्री बन गई, तब एक क्षण के लिए भी रहने देने का अनुरोध करना, उसके विचार में, उचित नहीं है। विवाह के बाद कन्या के अभिभावक स्वभावतः यही चाहते हैं कि कन्या अभी कुछ दिनों तक नैहर में ही रहे। कारण, कन्या के साथ जुड़ा हुआ माँ-बाप का गाढ़ा स्नेह जल्दी कन्या को विलग होने देना नहीं चाहता। इसीलिए, बिदाई का क्षण बड़ा दुःखदायी होता है।

निस्सन्देह, भोजपुरी के विवाह-गीत विशुद्ध प्रणय के गूढ़ रहस्यों से परिपूर्ण हैं और उन्हें व्यक्त करने की विविध प्रणालियों को भोजपुरी लोक-गीतों के रचयिताओं ने अपनाया है।

■

आरा नगर के पराक्रम का एक रोमांचकारी ऐतिहासिक उदाहरण

विशाल साधन-सम्पन्न अंगरेज-सेना को अपने मुट्ठी-भर सैनिकों के साथ बुरी तरह पराजित कर वीर कुँवरसिंह ने आरा नगर पर अपनी विजय का झण्डा फहरा दिया था। अंगरेजों की इससे बड़ी तौहीनी हुई। सेनानायकों में आवश्यक परिवर्तन कर अंगरेजों ने द्विगुणित शक्ति से पुनः युद्ध किया और ८० वर्ष के उस बूढ़े युवक सिंह के आजाद नगर आरा पर पुनः कब्ज़ा कर लिया। प्रतिशोध की भावना से आरा नगर के सभी निवासियों को एक खासा सबक सिखाने के लिए अंगरेजों ने १८५८ की धारा १० के अनुसार Govt Versus Arrah Town: charge Rebellion के मातहत W.J. Harshel नाम के एक विशेष जिलाधीश की अदालत में विशेष मुकदमा दायर कर दिया। उनपर दीवानी कचहरी तथा सदर अमीन के कार्यालयों को जला देने तथा मुंसिफ के कार्यालय तथा अन्य अनेक प्रशासकीय भवनों को क्षतिग्रस्त करने के आरोप लगाये गये। उसमें घोषित कुछ अपराधियों को तो अंगरेजों ने फाँसी दे दी और बाद में सारे आरा शहर पर सामूहिक जुर्माने की सजा सुना दी। किन्तु, इन दुष्कृत्यों के फलस्वरूप, शीघ्र ही अपने भयावह भविष्य की कल्पना कर अंगरेजों ने उस आदेश को स्वयं ही रद्द कर दिया।

लोकवार्त्ताओं के आधार पर
प्रस्तुति- डॉ. राजाराम जैन

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भोजपुरी भाषा एवं लोक साहित्य : इतिहासकारों की दृष्टि में

संकलन— डॉ. कमलकुमारी
संस्कृत विभागाध्यक्ष
म. म. महिला कॉलेज, आरा

भोजपुरी— गद्य के उपलब्ध प्राचीन रूप :

"भोजपुरी-गद्य के प्राचीन रूप पण्डित दामोदर शर्मा (१२ वीं सदी) की प्राकृत-अपभ्रंश रचना "उक्तिव्यक्तिप्रकरण" (सिंघी जैन ग्रन्थमाला, बम्बई द्वारा प्रकाशित) में उपलब्ध है, जिसमें उन्होंने प्रसंगवश "वेद पढ़व, स्मृति अभ्यासिव, पुराण देखव, धरम करव" जैसे भोजपुरी-वाक्यों के प्रयोग किए हैं। इससे यह स्पष्ट है कि १२वीं सदी में भोजपुरी गद्य में विचारों की अभिव्यक्ति होने लगी थी। बहुत सम्भव है कि उक्त "उक्तिव्यक्तिप्रकरण" के अतिरिक्त अन्य रचनाएँ भी भोजपुरी-गद्य में लिखी गई हों और वे हस्तलिखित रूप में सूर्य की किरणें देखने के लिए तरस रही हों ? अतः भोजपुर जिले के मठों, मन्दिरों एवं प्राच्य-ग्रन्थागारों में उनकी खोज की बड़ी आवश्यकता है।" (डॉ. राजाराम जैन)

भोजपुरी भाषा की उत्पत्ति

"भोजपुरी प्राच्यवर्ग के अन्तर्गत आती है, जिसका पश्चिमी रूप अर्धमागधी-प्राकृत और पूर्वी रूप मागधी-प्राकृत-इन दोनों के बीच होने के कारण उसमें कुछ-कुछ अंशों में दोनों (प्राकृत-भाषाओं) के लक्षण पाये जाते हैं।"

दे. पंचदश लोकभाषा-निबन्धावली, पृ. २४-२५

(बिहार-राष्ट्रभाषा-परिषद, पटना, सन् १९६० ई.)

भोजपुरी-भाषा

"भोजपुरी वस्तुतः एक कर्मठ जाति की व्यावहारिक भाषा है, जिसका प्रभाव सम्पूर्ण भारत में अनुभूत हुआ है और जो परिस्थितियों के अनुकूल अपने को ढालने के लिए सदा तैयार रहती है। हिन्दुस्तान को जागरित करनेवालों में बंगाली और भोजपुरी दो मुख्य भाषाएँ हैं, जिसे प्रथम ने अपनी कलम से और दूसरे ने अपनी लाठी से पूरा किया है।"

दे. जॉर्ज ग्रियर्सन : लिंग्विस्टिक सर्वे ऑव इण्डिया, ५/२ पृ. ४.

भोजपुरी की पहिचान

"स्वस्थ एवं बलिष्ठ शरीर तथा हाथ में लम्बी लाठी- यह है ठेठ भोजपुरी की पहचान। भोजपुरी युवक, संसार की सबसे सुन्दर सैनिक जातियों से टक्कर ले सकते हैं।"

दे. पं. जयचन्द्र विद्यालंकार (सुप्रसिद्ध इतिहासकार) कृत

"भारत-भूमि और उसके निवासी", पृ. २०

"संसार के लगभग छह करोड़ लोगों की मातृभाषा भोजपुरी है। बारहवीं शती में प्राकृत-अपभ्रंश, असमिया, बंगला, मैथिली, मगही और भोजपुरी के रूप अलग-अलग परिलक्षित होने लगे। राजनीतिक उथल-पुथल के प्रभाववश भोजपुरी में अपभ्रंश के साथ ही साथ दक्षिणी-पश्चिमी बोलियों का मिश्रण हुआ। ज्ञातव्य है कि प्राकृत-अपभ्रंश की कोख से और दूसरी भाषा के मेल से बिहारी-पूर्वी भाषाओं का जन्म हुआ। भोजपुरी, इन्हीं भाषाओं में अन्यतम है, जिसकी जननी अर्द्धमागधी-अपभ्रंश है।"

दे. "भोजपुरी अकादमी-पत्रिका" पटना

(हिन्दी-अनुवाद)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भोजपुरी लोक साहित्य का मोहक रूप

"भोजपुरी लोक-साहित्य की व्यापकता का प्रमुख कारण उसकी सरसता, मौलिकता, स्वाभाविकता एवं अलौकिक माधुर्य है। इसके उच्चारण में एक अद्भुत आकर्षण है। इसमें फ्रेंच के समान सुकुमारता तथा लोल-कल्लोलों के समान तरंगित उतार-चढ़ाव है। जिस प्रकार फ्रेंच अनुनासिकता स्वर-बाहुल्य तथा शब्दाबलियों के बिलम्बित उच्चारण के कारण उनमें संगीतात्मक ध्वनि निकलती है, उसी प्रकार भोजपुरी के लोक-साहित्य में भी अनुनासिक स्वरावलियों के प्रयोग के कारण उत्पन्न होनेवाला उसका अनिर्वचनीय माधुर्य जनमानस को बरबस मोह लेता है। उसकी उपमाएँ चित्र-विचित्र, शब्द-चयन सटीक एवं उसकी भाषा भावानुगामिनी होती है।"

डॉ. बनारसी प्रसाद भोजपुरी

■

सच्चे लोगम्मि सारभूयं—

With best wishes—

Phone : 21517

Authorised Retail Counter for

Siyaram's Sutings & Shirtings

Kindly visit —

JAIN VASTRALAYA

Chowk, ARRAH

With best compliments from :

Rupa Macroman

is in your town

YEH ARAM KA MAMLA HAI

Distributor of Bhajpur —

M/s. Kailash Kumar Sarwan Kumar

ARRAH

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भोजपुर एवं भोजपुरी के विकास के लिए अपेक्षित दिशाएँ

डा. राजाराम जैन

भोजपुरी भाषा के गुणगरिष्ठ गौरव तथा पूर्वी भाषाओं में उसके विशेष महत्व पर पिछले लगभग २-३ दशकों से कुछ चर्चाएँ होती आ रही हैं। भोजपुरी लोक-साहित्य की सरसता, सौष्ठव, प्रेषणीयता तथा संगीतात्मक मोहक स्वर-लहरी ने भारतीय लोक-साहित्य में अपनी विशिष्ट पहिचान बनाई है।

भोजपुर जनपद की प्राचीनता पर यद्यपि कुछ विचारकों ने प्रकाश डाला है, किन्तु वह अपर्याप्त है, अतः हमारी दृष्टि से उसके निम्न पक्षों पर स्वतन्त्र रूप से विस्तृत शोध कार्य कर उसके प्रच्छन्न गौरव को उजागर करने की तत्काल आवश्यकता है :—

प्राचीन साहित्य में भोजपुर जनपद
भोजपुर : इतिहास के आलोक में
भोजपुर का प्राकृतिक भूगोल
भोजपुर का आर्थिक भूगोल
भोजपुर का राजनैतिक भूगोल
भोजपुर के उद्योग धन्धे
भोजपुर के खनिज-पदार्थ
भोजपुर के प्राचीन साहित्यकार
भोजपुर के आधुनिक साहित्यकार
भोजपुर में उत्खनन कार्य (पुरातात्विक दृष्टि से)
भोजपुर के ऐतिहासिक स्थल
भोजपुर के साहित्यिक केन्द्र
भोजपुर के महान सपूत
भोजपुर के क्रान्तिकारी महापुरुष
भोजपुर में प्रचलित धर्म एवं सम्प्रदाय
भोजपुर के प्राचीन पुस्तकालय
भोजपुर की संस्कृति एवं सामाजिक रीति-रिवाज
भोजपुर की बीमारियाँ एवं उनके घरेलू इलाज
भोजपुर के कुछ प्रवासी-नागरिक
भोजपुर जनपद की पत्र-पत्रिकाएँ
भोजपुर जनपद की धार्मिक क्रान्तियाँ
भोजपुर जनपद के विद्वानों के शोधकार्य
भोजपुर जनपद की विदुषी महिलाएँ
भोजपुर जनपद : विदेशियों की दृष्टि में
भोजपुर की वनस्पतियाँ
भोजपुर के जीव जन्तु
भोजपुर के वन्य प्राणी
भोजपुर जनपद की शिक्षा संस्थाएँ
भोजपुर जनपद के प्रमुख महाविद्यालय
भोजपुर जनपद के प्रमुख उच्च विद्यालय
भोजपुर जनपद के महत्वपूर्ण शोध संस्थान
भोजपुर जनपद सम्बन्धी विविध शोध कार्य
भोजपुर जनपद की कुछ स्वायत्तसेवी संस्थाएँ
भोजपुर जनपद की गौरव संस्था— ना. प्र. स.
भोजपुर के महान क्रान्तिकारी वीर कुँवरसिंह एवं अमरसिंह

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भोजपुर की साहित्यिक गतिविधियाँ

भोजपुर की हिन्दी संस्थाएँ

भोजपुर के हिन्दी कथाकार

भोजपुर की पत्रकारिता

भोजपुर के संत कवि

भोजपुरी भाषा : उद्गम और विकास

भोजपुरी कहावतें : इतिहास के आलोक में

भोजपुरी मुहावरे

भोजपुरी का प्राचीन साहित्य

भोजपुरी का अर्वाचीन साहित्य

भोजपुरी के कुछ विशिष्ट शब्द

भोजपुरी शब्द-कोश

भोजपुर और भोजपुरी : विविधाएँ (सन्दर्भ)

भोजपुरी लोकगीतों का सौष्ठव

भोजपुरी-सिनेमा

उक्त विषयों को आधार बनाकर उच्चस्तरीय शोधकार्य किये जा सकते हैं तथा भोजपुर-वैभव अथवा भोजपुर अभिनन्दन-ग्रन्थ निकालकर भी भोजपुर के गौरव को उजागर किया जा सकता है।

5170

■

समसत्तु बंधु वग्गो सम सुह दुक्खो पसंसणिंद समो।
सम लोट्ठु कंचणो पुण जीविद मरणे समो समणो ।।

— सच्चा श्रमण वही है, जो शत्रु-बन्धु, सुख-दुख, प्रशंसा-निन्दा, पत्थर-सोना एवं जीवन-मरण में भी समान स्थिति में रहता है।

With best compliments from

M/S. JAIN GLASS & HARDWARE STORES

Shivganj, Arrah

■ HEMESHWAR INVESTMENTS
Mahajan Toli No. 1, ARRAH

■ HEMESHWAR FORESTRY & MARKETINGS PVT. LTD.
ARRAH

Phone—
21477 (Shop)
31704 (Res.)

— Sarat Kumar Jain & Smita Jain

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

श्रूयते सर्वशास्त्रेषु समयेषु च।
अहिंसा लक्षणो धर्मस्तद्विपक्षश्च पातकम् ॥

With Best Compliments on the Occasion Of Golden Jubilee: Celebrations—

Phone— 31767

PUJA SALES

Chitra Toli Road, ARRAH.

WHOLE SALE DEALER—

M/s. Godrej & Boyce Mfg. Co. Ltd., BOMBAY.

DEALS IN—

Office Furnitures, Typewriters, Refregerators,. Storewels sec.....Locks etc.

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

— कडुवा मजाक के लिए जहर है —

With Best Compliments from —

KRISHNA STORES

CHOWK, ARRAH

Your Favorite Retail Shop of

Readymade Garments, Hosiery, School Dresses and Woolen Goods

दया ही मानव-धर्म है

With Best Compliments from

Pal Vastralaya

JAGJIWAN MARKET

ARA — 802301

Kindly visit for Saris, Shirting and Dress-materials

खामेमि सव्वे जीवा सव्वे जीवा खमंतु मे ।
मित्ती मे सव्व भूएसु बेरं मज्झं ण केण वि ॥ (कुन्दकुन्द)

With the best Compliments from

Libra Pharmaceuticals Pvt. Ltd.

New Delhi — 110 062

Manufacturer of Quality Medicines

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पापी से नहीं पाप से घृणा करो

स्वर्ण जयन्ती के शुभावसर पर मंगल-कामनाएँ

कुन्दन ऑटो स्टोर्स

डी. टी. रोड (निकट जैन स्कूल, आरा)

अधिकृत विक्रेता — सिएट, एम. आर. एफ., विक्रान्त जे. के., विरला, गुड ईयर, टायर, ट्यूब, फ्लैप।

स्वर्ण जयन्ती के शुभावसर पर

शुभ कामनाओं के साथ— फोन—२१२५०

प्रकाश प्रेस

रंगीन एवं एम्बोस छपाई तथा फैन्सी बैज के निर्माता

जेल रोड, आरा

शुभ कामनाओं के साथ—

फोन — ३१६३९ पी. पी.

रोहित नौवैल्टीज

क्राकरीज, थर्मोवियर, ईगल, मिल्टन, सेलो, गिफ्ट पैक, खिलौना आदि के विक्रेता

नागरी प्रचारिणी सभा मार्केट काम्प्लेक्स

रमना रोड, आरा (बिहार)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भद्रं भूयात् शुभं भूयात्

हरप्रसाददास जैन महाविद्यालय की स्वर्ण जयन्ती

पर

नववर्ष की शुभ कामनाओं के साथ—

नागरमल शिवनारायण

अधिकृत विक्रेता — ग्वालियर सूटिंग्स

चौक, आरा—८०२३०१

तथा

श्याम ट्रेडिंग कम्पनी

चौक, आरा—८०२३०१

वितरक—

हिन्दुस्तान लीवर लिमिटेड, नोविन्नो बैट्री तथा HMT घड़ियाँ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दीन-दुखियों को सहारा दो, उन पर हँसो मत

With best compliments from

PATNA GENERAL TAILORS

Suits Specialist

&

FIYAZ BOOT HOUSE

Chitra Toli Road, ARA

United we stand and Divided we fall

With best compliments from

NAGARMAL SATYANARAIN

Chitra Toli Road,

ARRAH — 802 301

सत्य के समान कोई कीर्ति नहीं

With best compliments from

GUPTA ABHUSHAN BANDAR

JAIL ROAD

ARA

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मन की पवित्रता ही सबसे बड़ा धर्म है

With Best Compliments from —

NEW JALJOG

Kindly visit for—

ALL KINDS OF SWEETS & CONFECTIONARY

Sheesh Mahal Chowk, ARRAH

Dealer in Quality Sweets

SALE **SERVICE** **REPAIRS**

COMET ELECTRICAL-APPLIANCES

Room Cooler, Fan, Geyser, Mixer, Oven, Gas Tandoor, Heat-Convertor Room-Heater, Immersion Heater, Iron, Table Lamp etc.

Authorised Stockist—

BHOLA ELECTRICALS

Opp. MainaSundar Dharmasala, Jail Road, ARA

समय ही जीवन की अमूल्य सम्पत्ति है

जैन कॉलेज की स्वर्ण जयन्ती पर हमारी मंगल-कामनाएँ

फोन— २१४१३

नीलम वाच कम्पनी

चित्रटोली रोड, आरा

अधिकृत विक्रेता—

HMT, TITAN घड़ियाँ, VIP, ARISTROCRAT लगेज

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

णमो आइरियाणं

मंगल-कामनाओं के साथ—

ह. दा. जैन महाविद्यालय छात्रावधि की मधुर स्मृति में—

पद्मराजकुमार जैन

पूर्व-छात्र एवं

सम्पादक— आरण्य ज्योति पाक्षिक

विजय आश्रम, १ महाजन टोली, आरा

णमो लोए सव्व साहूणां

ह. दा. जैन कॉलेज की स्वर्ण जयन्ती के शुभ अवसर पर मंगल कामनाएँ

वर्ग नर्सरी से मैट्रिक तक की उत्कृष्ट पढ़ाई के लिए—

हरखेन कुमार जैन विद्यालय

महादेवा रोड, आरा (बिहार)

अन्तर्गत—

हरखेनकुमार जैन चैरीटेबिल ट्रष्ट, आरा

परस्परोपग्रहो जीवानाम्

ह. दा. जैन कॉलेज आरा की स्वर्ण जयन्ती पर हार्दिक बधाई —

रहे भावना ऐसी मेरी सरल सत्य व्यवहार करूँ।
बने जहाँ तक इस जीवन में औरों का उपकार करूँ।
मैत्रीभाव जगत में मेरा सब जीवों से नित्य रहे।
दीन दुखी जीवों पर मेरे उर से करुणा स्रोत बहे ॥

— अचिन्त्य कुमार जैन

भ. महावीर मार्ग, जेल रोड, आरा

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शोषितों एवं पीड़ितों को सहारा दो। उन पर हँसो मत। — महावीर

With Best Compliments from

Friend's Commercial Institute

JAIL ROAD, ARRAH

AN IDEAL AND OLDEST TRAINING CENTRE OF SHORT HAND AND TYPE-WRITING

पापी से नहीं पाप से घृणा करो

With Best Compliments from —

KALOORAM BABOOLAL

RAMNA ROAD, ARA

Kindly visit for Petrol, Diesel and Servicing of Vehicles

United We Stand & Divided We Fall

With Best Compliments from —

G D M Tailors

SUIT SPECIALIST

D. T. Road

ARA — 802 301

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सेन्ट्रल को-ऑपरेटिव बैंक लि., आरा (प्रधान कार्यालय)

प्रगति एवं उपलब्धि

हमारी शाखाएँ— (१) आरा (२) आरा नगर (३) आरा चौक (४) बडहरा (५) कोईलवर (६) सन्देश (७) नारायणपुर (८) उदवन्तनगर (९) गडहनी (१०) चरपोखरी (११) तरारी (१२) पीरो (१३) जगदीशपुर (१४) बिहियां (१५) शाहपुर (१६) ब्रह्मपुर (१७) सिमरी (१८) डुमरांव (१९) नवानगर (२०) बक्सर (२१) इटाडी (२२) घनसोई (२३) राजपुर।

१. जिला के लगभग ८१,००० कृषक सदस्यों को लगभग ८७७-३४ लाख रुपया फसली ऋण देकर लाभान्वित किया गया है।

२. अनेकों साख समितियों के माध्यम से लगभग ७४-०० लाख रुपया विभिन्न कार्यों हेतु सदस्यों को प्रदान किये गये हैं।

३. जिला के लगभग ९३,००० जमाकर्ताओं का लगभग १७ (सत्रह) करोड़ रुपया विभिन्न प्रकार के जमा के रूप में स्वीकार किया गया है।

४. हर प्रकार के जमा पर अन्य व्यावसायिक बैंकों की अपेक्षा आधा प्रतिशत अधिक सूद दिया जाता है।

५. अनेकों प्रकार की विशेष जमा योजनाओं के माध्यम से जिसमें ५ १/२ वर्षों में दूना से भी अधिक रकम देने की योजना भी है, से ग्राहकों को लाभान्वित किया जाता है।

६. आरा एवं बक्सर शाखा में लॉकर की सुविधा प्रदान की गयी है।

७. निस्वार्थ भाव एवं मधुर व्यवहार से अपने ग्राहकों को संतुष्ट एवं प्रसन्न करना ही हमारा लक्ष्य है।

हमारी उपलब्धियाँ

	रुपया लाख में (३१.३.९२)
१. हिस्सा पूंजी	२९९.५०
२. सुरक्षित कोष एवं निधि	८७.४२
३. जमा	१८०८.५६
४. वोरोविंग्स	३९८.५१
५. कार्यशील पूंजी	२,५९३.९५
६. विनियोग	१,२४९.०२

कृपया विशेष जानकारी हेतु स्थानीय शाखा प्रबन्धक से सम्पर्क स्थापित करें।

पी. पी. ओझा	सत्येन्द्र नारायण सिंह	लखनदेव सिंह
प्रबन्ध निदेशक	*उपाध्यक्ष*	*अध्यक्ष*

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

5170

JK PAPER CARRIES ON THE MAGIC OF COMMUNICATION

Communication

The magic which has made man the undisputed master of the Universe. With power over beast and nature.

And Paper.

Which has made communication possible. In the spread of knowledge. In business, social contact or packaging essentials.

JK Paper.

In its own way carries on this magic of communication. In more ways than one. Through its range of papers. Each specifically developed for your needs.

JAYKAY

JK PAPER
A DIVISION OF
STRAW PRODUCTS LTD.

JK BOND • JK AIRMAIL • JK POSTER • JK SUPER COPIER • JK COTE PAPER & BOARDS • JK CREAMWOVE • JK MAPLITHO

FS Advertising/JKP/400

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi